All Subject to Patiala Jurisdiction.

साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

मूल्य : 6/- रुपए

खेती संदेश

Postage Registered No. PB/PTA/0339/2025-2027

WEEKLY KHETI SANDESH

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

Chief Editor : Parminder Kaur • RNI - PBBIL/25/A0210 • Issue Dt. 27-07-2026 • Vol.2 No.30 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • M. 90410-14575 • Page 12

माइक्रोप्लास्टिक वे प्लास्टिक कण हैं जिनका आकार 5 मिलीमीटर से कम होता है। खेतों और बागों में प्रयुक्त प्लास्टिक सामग्री जब लंबे समय तक धूप, गर्मी, वर्षा और हवा के संपर्क में रहती है, तो वह धीरे–धीरे टूट कर इन्हीं सूक्ष्म कणों में बदल जाती है। आकार में अत्यंत छोटे होने के कारण ये कण आसानी से दिखाई नहीं देते, लेकिन मिट्टी में लंबे समय तक बने रह सकते हैं। यही कारण है कि आज इन्हें कृषि एवं पर्यावरण दोनों के लिए उभरती हुई चुनौती माना जा रहा है।

फलों के बागों में प्लास्टिक का बढ़ता खतरा : किसान कैसे करें बचाव?

डॉ. सविता रानी, सहायक वैज्ञानिक (मृदा रसायन), उद्यान विभाग और
डॉ. रजनीकांत शर्मा, एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, रसायन विज्ञान विभाग,
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

पिछले कुछ वर्षों में फलों की खेती में प्लास्टिक का उपयोग तेजी से बढ़ा है। पॉलीथीन मल्च, ड्रिप एवं स्प्रिंकलर पाइप, नर्सरी बैग, उर्वरकों और कीटनाशकों की प्लास्टिक पैकिंग जैसी सामग्री ने बागवानी को अधिक सुविधाजनक और आधुनिक बनाया है। इन तकनीकों से पानी की बचत होती है, खरपतवार नियंत्रण आसान होता है तथा उत्पादन में भी सुधार देखने को मिलता है। लेकिन इन सुविधाओं के साथ एक ऐसी समस्या भी धीरे–धीरे सामने आ रही है, जिस पर अब वैज्ञानिकों का विशेष ध्यान है–माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण।

माइक्रोप्लास्टिक वे प्लास्टिक कण हैं जिनका आकार 5 मिलीमीटर से कम होता है। खेतों और बागों में प्रयुक्त प्लास्टिक सामग्री जब लंबे समय तक धूप, गर्मी, वर्षा और हवा के संपर्क में रहती है, तो वह धीरे–धीरे टूटकर इन्हीं सूक्ष्म कणों में बदल जाती है। आकार में अत्यंत छोटे होने के कारण ये कण आसानी से दिखाई नहीं देते, लेकिन मिट्टी में लंबे समय तक बने रह सकते हैं। यही कारण है कि आज इन्हें कृषि एवं पर्यावरण दोनों के लिए उभरती हुई चुनौती माना जा रहा है। विश्व स्तर पर हर वर्ष करोड़ों टन प्लास्टिक का उत्पादन होता है और उसका एक बड़ा भाग उपयोग के बाद अपशिष्ट के रूप में पर्यावरण में पहुंच जाता है। यदि इसका उचित प्रबंधन न

किया जाए, तो समय के साथ यही प्लास्टिक छोटे–छोटे कणों में टूटकर मिट्टी, जल स्रोतों तथा कृषि भूमि में फैल सकता है। फलों के बाग भी इससे अछूते नहीं हैं। माइक्रोप्लास्टिक केवल एक ही स्रोत से नहीं आते, बल्कि बागों में कई गतिविधियां इनके प्रवेश का कारण बन सकती हैं :-

* लंबे समय तक उपयोग के बाद पॉलीथीन मल्च का टूटना।
* पुरानी एवं क्षतिग्रस्त ड्रिप या स्प्रिंकलर पाइपों का घिसना।
* उर्वरकों और कीटनाशकों की खाली प्लास्टिक पैकिंग का खेत में छोड़ देना।
* नगरों के अपशिष्ट जल अथवा प्रदूषित जल स्रोतों से सिंचाई करना।
* नदियों, नालों और तालाबों से आने वाले प्रदूषित सिंचाई जल का उपयोग।
* प्लास्टिक मिश्रित कम्पोस्ट या अन्य ठोस अपशिष्ट का प्रयोग।
* नदियों, नालों या तालाबों से आने वाला प्रदूषित सिंचाई जल।
* प्लास्टिक युक्त कम्पोस्ट या अन्य अपशिष्ट का उपयोग।

फलों के पौधों तथा मिट्टी पर संभावित प्रभाव

अत्यधिक माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण की स्थिति में जड़ों का सामान्य विकास धीमा पड़ सकता है। पौधों की पोषक तत्व लेने की क्षमता कम हो सकती है। मिट्टी के लाभकारी सूक्ष्मजीव प्रभावित हो सकते हैं। लंबे समय में उत्पादन और फलों की गुणवत्ता पर असर पड़ सकता है। हालांकि विभिन्न फसलों और परिस्थितियों में इन प्रभावों की तीव्रता अलग–अलग हो सकती है। इन प्रभावों की मात्रा प्लास्टिक के प्रकार, आकार, मात्रा तथा मिट्टी की स्थिति पर निर्भर करती है। यदि मिट्टी में लगातार प्लास्टिक कण जमा होते रहें, तो वे इसकी भौतिक और जैविक विशेषताओं को प्रभावित कर सकते हैं। मिट्टी केवल रेत, गाद और चिकनी मिट्टी का मिश्रण नहीं है। यह करोड़ों सूक्ष्मजीवों, केंचुओं, कार्बनिक पदार्थों और पोषक तत्वों का एक जीवंत तंत्र है। इनके कारण :

* मिट्टी की संरचना प्रभावित हो सकती है।
* जल धारण क्षमता में परिवर्तन हो सकता है।
* लाभकारी सूक्ष्मजीवों की गतिविधियां प्रभावित हो सकती है।
* पोषक तत्वों के चक्रण में बाधा आ सकती है।
* जड़ों के आसपास का सूक्ष्म वातावरण बदल सकता है।

किसान क्या करें और क्या न करें?

माइक्रोप्लास्टिक दिखाई नहीं देते, लेकिन मिट्टी में वर्षों तक बने रह सकते हैं। इसलिए रोकथाम ही सबसे प्रभावी उपाय है। अच्छी खेती केवल उन्नत तकनीकों से नहीं, बल्कि संसाधनों के जिम्मेदार उपयोग से भी संभव होती है। यदि किसान कुछ सरल सावधानियां अपनाएं तो माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण के खतरे को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

* अच्छी गुणवत्ता की UV–स्थिर मल्च फिल्म का उपयोग करें।
* फसल समाप्त होने के बाद मल्च शीट को खेत से पूरी तरह निकालें।
* क्षतिग्रस्त ड्रिप पाइप एवं प्लास्टिक सामग्री को खेत में न छोड़ें।
* उर्वरक एवं कीटनाशक की खाली प्लास्टिक पैकिंग का सुरक्षित संग्रह एवं निस्तारण करें।
* सिंचाई के लिए यथासंभव स्वच्छ जल स्रोतों का उपयोग करें।
* जैविक पदार्थ (गोबर की अच्छी तरह सड़ी खाद, वर्मी कम्पोस्ट आदि) का संतुलित उपयोग कर मिट्टी के स्वास्थ्य को बेहतर बनाए रखें।
* खेत एवं बाग की नियमित सफाई करें और प्लास्टिक कचरे को अलग एकत्रित करें।
* यदि मल्च का उपयोग आवश्यक हो, तो उसकी समय–समय पर निगरानी करें और टूट–फूट होने पर समय पर बदलें।
* प्लास्टिक कचरा खेत में न फेंकें।
* मल्च फिल्म को खेत में सड़ने के लिए न छोड़ें।
* प्लास्टिक कचरे को खुले

में न जलाएं, क्योंकि इससे हानिकारक गैसें निकलती हैं और पर्यावरण प्रदूषित होता है।
* अत्यधिक पुरानी या फटी हुई ड्रिप पाइप का लंबे समय तक उपयोग न करें।
* अज्ञात स्रोत के ठोस अपशिष्ट या कम्पोस्ट का बिना गुणवत्ता जांच के उपयोग न करें।
* प्लास्टिक अपशिष्ट को सामान्य जैविक कचरे के साथ न मिलाएं।

भविष्य की संभावनाएं

माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण कृषि के लिए उभरती हुई चुनौती है। भारत सहित विश्व भर में वैज्ञानिक इस बात का अध्ययन कर रहे है कि माइक्रोप्लास्टिक मिट्टी, पौधों, जल और खाद्य श्रृंखला को किस प्रकार प्रभावित करते हैं। भविष्य में बेहतर प्लास्टिक प्रबंधन, पुनर्चक्रण (रिसाइक्लिंग), जैव–अपघटनीय (Biodegradable) विकल्पों का विवेकपूर्ण उपयोग तथा नियमित निगरानी इस समस्या को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। आधुनिक तकनीकों जैसे FTIR (Fourier Transform Infrared Spectroscopy), Raman Spectroscopy, Pyrolysis-GC/MS, Scanning Electron Microscopy (SEM) की सहायता से इन सूक्ष्म प्लास्टिक कणों की पहचान और विश्लेषण किया जा रहा है। आने वाले वर्षों में इन अध्ययनों से अधिक स्पष्ट जानकारी मिलने की संभावना है।

निष्कर्ष

फलों के बागों में प्लास्टिक का उपयोग कई कृषि कार्यों को सरल बनाता है, लेकिन इसके अवशेषों का उचित प्रबंधन न होने पर माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण एक गंभीर पर्यावरणीय चुनौती बन सकता है। अत्यंत छोटे आकार के माइक्रोप्लास्टिक और विशेषकर नैनोप्लास्टिक कुछ परिस्थितियों में पौधों के भीतर प्रवेश कर सकते है। थोड़ी–सी सावधानी–जैसे प्लास्टिक कचरे का सुरक्षित निस्तारण, गुणवत्तापूर्ण मल्च का उपयोग, सिंचाई जल की गुणवत्ता पर ध्यान तथा खेत की नियमित सफाई–से इस समस्या को काफी हद तक कम किया जा सकता है। स्वस्थ मिट्टी ही स्वस्थ पौधों और गुणवत्तापूर्ण फलों की आधारशिला है, इसलिए आज से ही प्लास्टिक के जिम्मेदार उपयोग और उचित प्रबंधन को अपनाना समय की आवश्यकता है।

फसलों के उत्पादन में जस्ते का महत्व

पौधे वायुमंडल से कार्बन डाईऑक्साइड एवं भूमि से पानी तथा खनिज पदार्थ ग्रहण करके सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में जैविक पदार्थ का निर्माण करते है। वैज्ञानिक परीक्षणों के आधार पर 18 तत्वों को पौधों के लिए आवश्यक निरूपित किया गया है। इनमें से मुख्य तत्व कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश है। उक्त पोषक तत्वों में से कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन तत्व पौधे वायुमंडल से ग्रहण कर लेते है। नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश पौधों को अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है, अत: इनकी आवश्यकता को खाद व उर्वरकों के द्वारा पूरा किया जाता है तथा कैल्शियम, मैग्नीशियम और सल्फर की आवश्यकता कम होने के कारण इन्हें गौण पोषक तत्व कहा जाता है। इसके अतिरिक्त लोहा, तांबा, जस्ता, मैगनीज़, बोरोन, चयापचय, क्लोरीन व निकल आदि सूक्ष्म तत्वों की पौधों को कम मात्रा में आवश्यकता होती है। इन सभी सूक्ष्म पोषक तत्वों में से इन गौण तत्व में से जस्ता अत्यंत महत्वपूर्ण है, जिसकी कमी से फसलों के उत्पादन पर बहुत विपरीत प्रभाव पड़ता है।

पौधों में ज़िंक की उपयोगिता निम्न प्रकार से है : सूक्ष्म पोषक

तत्व जैसे कि जस्ता पौधों, पशुओं व मानव स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। अनुमान है कि देश में लगभग 50 प्रतिशत मृदा नमूनों में जस्ते की कमी पाई गई है तथा जस्ते की कमी वाली मृदा से 70 प्रतिशत खाद्यान्न प्राप्त होता है, जिसके कारण फसलों, जानवरों एवं मनुष्यों में जस्ते की भारी कमी पाई गई है। भोज्य पदार्थ में जस्ते की कमी के फलस्वरूप बच्चों व नवजात शिशुओं में बौनापन एवं वृद्धि में कमी, संक्रमण, रोग प्रतिरोधी क्षमता में कमी तथा मानव शरीर में सूखी एवं खुरदरी त्वचा, निर्जीव बाल, भूख में कमी, खाज-खुजली, घाव देर से भरना जैसे सामान्य लक्षण प्रकट होते है। ज़िंक की कमी विकासशील देशों में मृत्यु का पांचवां सबसे बड़ा कारण है।

पौधे में जस्ते का कार्य :

1. जस्ता पादप हार्मोन (इंडोल

एसिटिक एसिड) के जैविक संश्लेषण, प्रोटीन संश्लेषण, कार्बोहाइड्रेट, चयापचय, परागकण निर्माण आदि क्रियाओं के स्थायी तत्व तथा एन्जाइम का प्रमुख अवयव है।

2. जस्ता पौधों की विभिन्न प्रतिक्रियाओं में उत्प्रेरक का कार्य करता है।

3. जस्ता पौधों की नत्रजन, फास्फोरस उपयोग तथा जल उपयोग को प्रभावित करता है।

4. फूलों व फलों के निर्माण तथा फसलों को जल्दी पकाने में जस्ता महत्वपूर्ण सहयोग करता है।

मृदा में जस्ते की कमी के कारण : रेतीली व बलुई मृदा में जस्ते की कमी स्वभावत ही होती है। बिना सड़े-गले जैव अवशिष्टों को डालना, भूमि को समतल करना, नत्रजन का अत्याधिक मात्रा में प्रयोग करना, क्षारीय पानी का प्रयोग करना, जैव पदार्थों की कमी आदि के कारण भूमि में जस्ते की कमी हो जाती है।

पौधे में जस्ते की कमी का सामान्य लक्षण : जस्ते की कमी के कारण पौधों में प्रकाश संश्लेषण एवं नत्रजन चयापचय कम हो जाती है। फूलों एवं फलों का विकास कम होना, फसलों को पकने में देरी होना, तनों में गांठों की दूरी कम हो जाना तथा पत्तियां एक ही स्थान से निकलना मुख्य लक्षण है। धान में रोपाई के दो-तीन सप्ताह बाद ऊपर से तीसरी-चौथी पत्ती के मध्य में पीलापन आना, लाल भूरे धब्बे के कारण पत्तियों में जंग लगने जैसा दिखाई देना, फुटाव की संख्या में कमी होना तथा फसल की वृद्धि रुक जाना, बालियों का देर से निकलना तथा जस्ते की कमी के कारण खैरा रोग भी धान फसल में हो जाता है।

पौधों में जस्ता की कमी को दूर करने के उपाय : मृदा में जस्ते का प्रयोग मिट्टी की जांच करवाने के बाद उचित मात्रा में डालें। मुख्यत: धान की फसल में जस्ते की आवश्यकता प्रारंभिक अवस्था में होती है, अत: नर्सरी में जस्ते का प्रयोग लाभदायक होता है।

महत्वपूर्ण बातें :

1. एक बार भूमि में ज़िंक सल्फेट का उपयोग करने से इसका प्रभाव खेत में एक-दो वर्ष तक रहता है।

2. धान-गेहूं फसल-चक्र में जस्ता की अधिक आवश्यकता होती है। धान में इसके प्रयोग से अधिक लाभ होता है तथा धान-गेहूं के फसल-चक्र में प्रत्येक बार धान की रोपाई के समय ज़िंक सल्फेट का प्रयोग करना चाहिए।

3. ज़िंक सल्फेट को बुवाई के समय देने पर फसल को अत्याधिक लाभदायक होता है।

4. जहां भूमि समतल करने के लिए भूमि की ऊपरी परत को हटा दिया गया है, वहां ज़िंक सल्फेट का प्रयोग अवश्य करना चाहिए।

5. फसल बुवाई के पश्चात् जस्ता की कमी को पूरा करने के लिए 500 ग्राम ज़िंक व 2.5 किलोग्राम यूरिया का 100 लीटर पानी में घोल बना कर खड़ी फसल में छिड़काव किया जा सकता है।

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9–ए, अजीत नगर,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 98151–04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 90410–14575

वर्ष : 02 अंक : 30
तिथि : 27-07-2026

सम्पादक

परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड

डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly **'KHETI SANDESH'** Printed at **Drishti Printers,** Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

प्लम – हिमाचल प्रदेश के निचले व मध्यम ऊंचाई वाले क्षेत्रों की महत्वपूर्ण फसल

भारत में उगाई जाने वाली अलूचा (प्लम) की जातियों को यूरोपियन तथा जापानी दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। यूरोपियन अलूचा के पौधे अधिक बढ़ने वाले होते हैं। इनकी पत्तियां बड़ी मोटी गहरी-हरी व चमकदार होती है। पत्तियों की निचली सतह तथा नये प्रहह रोयेंदार होते है। ये अधिक ठंड सहन कर सकते है तथा इनकी कृषि समुंद्र तल से 1200 से 2000 मीटर ऊंचाई तक की जा सकती है। जापानी अलूचे की पत्तियां अपेक्षाकृत छोटी व रोयें रहित और पौधे छोटे से मध्यम आकार के होते हैं। यह यूरोपियन अलूचे से 20-25 दिन पहले फलता है और समुंद्र तल से 600 से 1500 मीटर ऊंचाई तक सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। फल हृदयाकार होते हैं। अलूचे की कुछ जातियां उत्तरी-पश्चिमी मैदानी भागों में उगाई जा सकती हैं।

उपयोग : अलूचा अधिकतर ताज़े फल के रूप में खाया जाता है। इसकी कुछ जातियों के फलों को डिब्बाबंदी के लिए भी उपयोग किया जाता है। इससे जैम, जैली व कैंडी आदि पदार्थ भी बनाए जाते है। कुछ जातियां जैसे इटेलियन प्रून व शुगर प्रून के फल सुखाकर भी प्रयोग में लाए जाते हैं।

मिट्टी : अलूचा के लिए गहरी उपजाऊ अच्छे जल निकास वाली चिकनी दोमट मिट्टी उत्तम रहती है। मिट्टी की जल धारण क्षमता भी अच्छी होनी चाहिए। अधिक चिकनी व अधिक बलुई मिट्टी में अलूचा नही लगाना चाहिए। अलूचा अन्य गुठलीदार फलों की अपेक्षा मिट्टी की जलाक्रांत दशाओं के लिए अधिक सहनशील है।

जलवायु : अलूचा शीतोष्ण जलवायु का फल है, परन्तु कुछ जातियां मैदानी क्षेत्रों की समशीतोष्ण जलवायु में भी उगाई जाती है। जिन क्षेत्रों में जहां शीत ऋतु अधिक ठंडी व ग्रीष्म ऋतु गर्म रहती है तथा वर्षा अधिक होती है। वहां अलूचा अधिक फलता-फूलता है। समुंद्र तल से 1000 से 1600 मीटर ऊंचाई वाले पर्वतीय क्षेत्र अलूचे की अधिकांश जातियों के लिए उपयुक्त है। जापानी अलूचे की द्रुतशीतन (चिलिंग) आवश्यकता यूरोपियन अलूचे से कम होती है। मैदानी क्षेत्रों में उगाई जाने वाली अलूचे की जातियों की द्रुतशीतन आवश्यकता 70-100 घंटे होती है। फूलने व फलने के समय पाल या ओला अत्यंत हानिकारक होता है।

किस्में : भारत में उगाई जाने वाली अलूचा की अधिकांश जातियां जापानी वर्ग की है, परन्तु यूरोपीय वर्ग की कुछ जातियां बहुत अच्छे गुणों वाली है, जिन्हें पर्वतीय क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। महत्वपूर्ण जातियों का वर्गीकरण निम्नलिखित है :

ऊंचे पर्वतीय क्षेत्रों के लिए उपयुक्त किस्में :

शीघ्र पकने वाली किस्में : स्वीट अर्ली, मैथले, कैलसी।

मध्यम समय में पकने वाली किस्में : स्टारकिंग डिलिशियस, सतसूमा, करवैक, एलीफेन्ट हार्ट।

देरी से पकने वाली किस्म : मेरीपोजा।

मध्यम पर्वतीय क्षेत्रों के लिए उपयुक्त किस्में :

जल्दी पकने वाली किस्म : सैन्टारोजाए अर्ली, ट्रांसपेरन्ट गेजए, ब्यूटी।

मध्यम समय में पकने वाली किस्म : फ्रंटियर

देरी से पकने वाली किस्में : तीतरों, अलूचा, परपल।

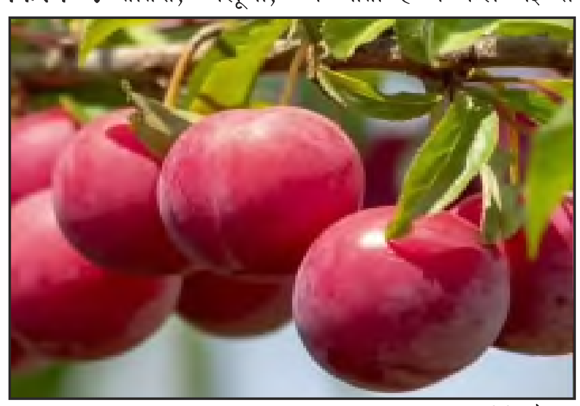

तीतरो : यह मैदानी क्षेत्रों के लिए सबसे अच्छी जाती है। इसके फूल मध्यम आकार के व बैंगनी रंग के होते है। छिलका पतला तथा गुदा मुलायम और कम रसदार होता है।

मेरीपोजा : इसका फल बड़ा व हल्का पीला होता है। गुदा बैंगनी रंग का तथा कठोर होता है और जुलाई-अगस्त में पकते है।

केलसी : फल बड़े शंकवाकार व हरापन लिए पीले रंग के होते है। गुदा लाली युक्त पीला रसदार व मीठा होता है। इसके फल जुलाई में पकते है।

सैंटा रोज : अत्यंत लोकप्रिय प्रजाति है। फल बड़ा लाली युक्त गहरा बैंगनी तथा शंक्वाकार होता है। गुदा सुनहरा-पीला अत्याधिक रसदार व मीठा होता है। फल जून-जुलाई में पकते है। यह भी एक स्वयं निसेशित प्रजाति है।

बरबैंक : इसके फल रंग, आकार तथा आकृति में ब्यूटी जैसे होते है, परन्तु गुदा अपेक्षाकृत सख्त होता है और फल जुलाई में पकते है।

फ्रंटीयर : फल सैंटारोजा से बड़ा, छिलका लाल बैंगनी, गुदा लाल सख्त मीठा व अच्छे गुणों वाला, गुठली आसानी से अलग होने वाली होती है। सैंटारोजा से 10-15 दिन बाद पकती है। इस किस्म के लिए पर-परागण के लिए सैंटारोजा किस्म के पौध लगाना आवश्यक है।

अर्ली ट्रांसपैरैंट गेज : यह एक यूरोपियन वर्ग की किस्म है। फल छोटा गोल व पीले रंग वाला और गुदा स्वादिष्ट होता है। यह अधिक फलने वाली व जुलाई में पकने वाली किस्म है।

शुष्क शीतोष्ण क्षेत्रों के लिए प्लम की सुखाने योग्य जातियां इटैलियन प्रून, शुगर प्रून तथा स्टनले प्रून आदि उगाई जा सकती है। स्टानले प्रून डिब्बाबंदी के लिए भी उपयुक्त है।

फूलना व फलना : प्लम के पौधे 3-4 वर्ष की आयु में फलना शुरू कर देते है एवं लगभग 30 वर्ष की आयु तक लाभकारी फल प्राप्त होते रहते है। फूल फरवरी-मार्च में आता है व फल मई से अगस्त तक प्राप्त होते है।

परागण : प्लम की अधिकतर किस्मों में स्वयं धायता पाई जाती है। अत: इनमें परागण हेतु विभिन्न किस्मों का लगाना ज़रुरी है। सान्तारोजा ब्यूटी व मैथले जातियों में स्वयं परागण फल लगते है, परन्तु यदि इनके साथ अन्य जातियों को लगाया जाए, तो फलत अच्छी होती है। इटैलियन प्रून तथा शुगर प्रून में भी स्वपरागण से फूल बन जाते है।

रोपण का समय : पौधों को 6×6 या 5×5 मीटर की दूरी 1×1×1 मीटर आकार के गड्ढों में दिसम्बर-जनवरी महीने में लगाते है।

खाद एवं उर्वरक : पौध लगाते समय 10 किलोग्राम गोबर की खाद तथा 500 ग्राम सुपर फास्फेट प्रति गड्ढे की दर से मिट्टी में मिला दें। प्रथम वर्ष में 280 ग्राम कैन, 220 ग्राम सुपर फॉस्फेट व 165 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति पौधा देनी चाहिए। सातवें वर्ष तक प्रति पौधा इतनी मात्रा प्रति वर्ष बढ़ा देनी चाहिए। उसके बाद यह मात्रा स्थिर कर देनी चाहिए। गोबर या कम्पोस्ट की मात्रा 5 किलोग्राम प्रति पौधा प्रति वर्ष सातवें वर्ष तक बढ़ाते रहें। खाद तथा उर्वरक कलिकाएं फूलने से 2-3 सप्ताह पूर्व देने चाहिए।

सिंचाई एवं निराई-गुड़ाई : अलूचा में भी आड़ू की तरह फलों के विकास के समय पानी की कमी नही होनी चाहिए, अन्यथा फलों में वृद्धि कम होती है तथा फल गिर जाते हैं। उप-पर्वतीय व मैदानी क्षेत्रों में ग्रीष्म ऋतु (अप्रैल से जून) में प्रति सप्ताह हल्की सिंचाई करनी चाहिए। पहाड़ी क्षेत्रों में जहां सिंचाई की सुविधा ना हो वहां भूमि की सतह को घास-फूस व पत्तियों से ढक कर नमी बनाए रखनी चाहिए।

मैदानी क्षेत्रों में वर्षा एवं शीत ऋतु के अंत में एक-दो बार निराई-गुड़ाई अवश्य कर देनी चाहिए। पर्वतीय क्षेत्रों में मृदा कटाव को रोकने के लिए वर्षा ऋतु के बाद पौधों के बीच के खाली क्षेत्र की घास काट कर भूमि पर फैला देते है तथा थालों की हल्की गुड़ाई कर देते है।

सिधाई एवं कृन्तन : जापानी वर्ग की अधिकांश जातियों में फैला कर वृद्धि करने की प्रवृत्ति है। अत: इनकी खुला केन्द्र प्रणाली ओपन सेन्टर सिस्टम के द्वारा सधाई की जाती है। अधिकांश यूरोपीय जातियों में तथा कुछ जापानी जातियों जैसे सान्तारोजा में ऊपर की ओर बढ़ने की प्रवृत्ति होती है, इस प्रकार की जातियों को रूपांतरित अग्र प्रहह प्रणाली (मोडीफाईड लीडर सिस्टम) द्वारा सधाई की जाती है। पौधों की सधाई करते समय कांट-छांट इस प्रकार से करनी चाहिए कि पौधे बाहर की ओर वृद्धि करें।

फलत: वाले अलूचे के पौधों में बहुत हल्की कटाई-छंटाई की आवश्यकता होती है। जापानी वर्ग की जातियां दलपुटों स्पर्श तथा एक वर्ष पुराने प्रहहों पर फल उत्पन्न करती है। इनमें एक वर्ष पुरानी टहनियों के ऊपर का एक-तिहाई भाग काट देते है, जिससे कि अगले वर्ष नये प्रहह तैयार हो सकें। यूरोपीय वर्ग की जातियों में अधिकांश फल दलपुटों पर लगते है। इसकी जातियों में बहुत कांट-छांट करते है। जब दलपुट पुराने हो जाए तो हल्का कृन्तन करना चाहिए, जिससे कि नये दलपुट बन सकें। कमज़ोर, रोग ग्रसित, घिनकी व अंदर की ओर वृद्धि करती हुई शाखाओं को निकाल देना चाहिए। अलूचा के कृन्तन का उपयुक्त समय दिसम्बर-जनवरी है।

तुड़ाई एवं उपज : मैदानी भागों में अलूचा के फल मई-जून में तथा पर्वतीय क्षेत्रों में जून-जुलाई में पक कर तैयार हो जाते है। फलों को पूर्ण रूप से पकने के पश्चात् ही तोड़ना चाहिए। यदि फल दूर के बाज़ारों में भेजने हो, तो पके हुए परन्तु कुछ कठोर अवस्था में फलों की तुड़ाई करनी चाहिए। फलों की तुड़ाई सावधानी पूर्वक करनी चाहिए ताकि फलों को कोई हानि ना हो। एक पौधे से औसत उपज 40 किलोग्राम तक हो जाती है।

किसान कीटनाशकों के प्रयोग करते समय क्या-क्या सावधानियां अपनाएं

यदि फसलों पर कीटों का प्रकोप अधिक हो जाए, तो उत्पादन की दृष्टि से फसलों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ऐसे में कीटनाशकों का छिड़काव करना आवश्यक हो जाता है, जिससे फसलों को कीटों के नुकसान से बचाया जा सके। कीटनाशक में रासायनिक पदार्थ होते हैं, जो कीटों को नियंत्रित करते हैं। सामान्यत: कीटनाशक ज़हरीले रसायन या फिर जैविक एजेंट जैसे वायरस, जीवाणु या फफूंद होते हैं, जोकि कीटों को नियंत्रित करते हैं, जिससे कीटों पर नियंत्रण आसान हो जाता है। परन्तु कीटनाशकों में मनुष्य सहित अन्य जीवों के लिए विषाक्त गुण पाए जाते हैं तथा इनके असंतुलित प्रयोग से फसलों में भी नुकसान होता है। इसलिए इनके प्रयोग से संबंधित कुछ विशेष बातों का ध्यान रखना चाहिए तथा इनके असंतुलित प्रयोग से फसलों में भी नुकसान होता है। इसलिए इनके प्रयोग से संबंधित कुछ विशेष बातों का ध्यान रखना चाहिए तथा प्रयोग करते समय सावधानीपूर्वक तथा उन पर लिखे हुए निर्देशों का पालन सही तरह से करना चाहिए, जिससे किसी प्रकार का नुकसान ना हो सके। अकसर देखने में आता है कि कीटनाशक छिड़कते समय किसान लापरवाही बरतते हैं। कीटनाशक ज़हरीले रसायन होते हैं, जो सांस के जरिए व त्वचा के द्वारा किसान के शरीर को नुकसान पहुंचा सकते हैं। इसलिए ज़रुरी है कि कीटनाशक का छिड़काव करते समय सावधानी बरती जाए, जिससे फसल के साथ-साथ किसान की सेहत भी ठीक रहे। एक बार मैंने देखा कि एक किसान कीटनाशक टैंक को कमर पर लगा कर छिड़काव कर रहा था। तब टैंक से रिस कर उसका रसायन किसान की बनियान को भिगोता हुआ, कीटनाशक कमर को भिगोता रहता है। उस समय तो जोश-जोश में मौसम की गर्मी का एहसास समझ कर किसान ने उसे नज़र-अंदाज कर दिया, लेकिन जब बाद में देखा तो कमर पर तमाम फफोले व चकते बन जाते हैं। डॉक्टर से इलाज भी करवाना पड़ा। अधिकतर किसान स्प्रे करते समय मुंह पर मास्क या कपड़ा भी नहीं बांधते, जबकि हवा में कीटनाशक उड़ कर सांस के जरिए किसान के शरीर में चला जाता है, जो बहुत घातक होता है। इसलिए ज़रुरी है कि मुंह पर मास्क या कपड़ा बांधा जाए।

कीटनाशकों के प्रयोग के पहले की सावधानियां

फसलों को क्षति पहुंचाने के लिए अलग-अलग प्रकार के कीट होते हैं। इसलिए उनकी पहचान कीटनाशक खरीदने से पहले ज़रुर कर लें तथा कीटनाशकों का प्रयोग तभी करें, जब कीटों के कारण फसल की आर्थिक क्षति स्तर से अधिक हो जाए।

1. कीटनाशकों के खरीदते समय सावधानी :

* कीटनाशक केवल पंजीकृत डीलर से ही खरीदें, जिसके पास वैध लाइसेंस हो।

* कीटनाशकों के पैकेट पर मान्यता प्राप्त लैब या संस्था का लेबल अवश्य देखें।

* कीटनाशकों का लेबल पर बैच संख्या, पंजीकरण संख्या, मैन्युफेक्चर और एक्सपाइरी तिथि अवश्य देखें तथा एक्सपाइरी तिथि खत्म होने पर कीटनाशक ना खरीदें।

* कीटनाशकों के ऐसे कंटेनर जो लीक हों, खुले हों या फिर जिन पैकेटों पर सील ना हो, उन्हें ना खरीदें।

* खेत के जिस विशेष क्षेत्र में छिड़काव करना हो, उसके अनुसार उतना ही कीटनाशक खरीदें। एक साथ अधिक मात्रा में पूरे खेत के लिए कीटनाशक ना खरीदें।

2. कीटनाशकों के वाहन व भंडारण संबंधी सावधानी :

* कीटनाशकों को खाद्य पदार्थों, पशु चारे या घरेलू सामग्रियों के साथ कभी भी ना ले जाएं, हमेशा वाहन में कीटनाशकों व उपरोक्त खाद्य पदार्थों को अलग-अलग रखें।

* कभी भी अधिक मात्रा में कीटनाशक को अपने नंगे हाथों से या कंधे पर ना उठाएं तथा इसके लिए प्लास्टिक रैप का इस्तेमाल करें।

* कभी भी कीटनाशकों का भंडारण घर में बंद कमरे या आंगन में ना करें तथा इसे घर से दूर बच्चों के सम्पर्क से दूर रखें।

* कीटनाशकों और खरपतवारनाशक का भंडारण एक साथ नहीं किया जाना चाहिए। इन्हें अलग-अलग भंडारण करें।

* कीटनाशकों को उनके कंटेनरों में ही रहने दें एवं उसे निकाल कर कभी भी दूसरे कंटेनरों में ना रखें।

* भंडारण के स्थान पर धूप और पानी से बचाव किया जाना चाहिए। इनका भंडारण हमेशा साफ-सुथरी एवं हवादार तथा सूखे स्थान पर करना चाहिए।

3. कीटनाशक छिड़काव हेतु यन्त्र का चुनाव करते समय सावधानी :

* खरपतवारनाशक या कीटनाशक दोनों के लिए एक ही स्प्रे यन्त्र का इस्तेमाल ना करें।

* लीक कर रहे स्प्रे यन्त्र या खराब यन्त्र का इस्तेमाल ना करें।

* खराब नोजलों का प्रयोग ना करें तथा नोजल में मुंह से हवा ना डालें और ना ही हवा से फूंक मारें। उसकी सफाई के लिए स्प्रे वाले टूथब्रश का प्रयोग करें।

* कीटनाशक छिड़काव से पूर्व स्प्रे यंत्र को अच्छे से साफ कर लें, इसमें पूर्व में स्प्रे किए हुए रसायन उपस्थित ना हों।

कीटनाशकों के इस्तेमाल करते समय सावधानियां

1. छिड़काव के लिए घोल तैयार करते समय :

* कीटनाशक का घोल बनाते समय आस-पास जानवर या बच्चे नहीं होने चाहिए।

2. कीटनाशक के घोल को मिलाने के लिए लकड़ी के डंडे का प्रयोग करना चाहिए तथा कीटनाशक दवा का अदल-बदल कर स्प्रे करें, क्योंकि एक ही कीटनाशक दवा छिड़कने पर कीट उसके आदी हो जाते हैं।

* कृषि वैज्ञानिकों या कृषि अधिकारी द्वारा की गई सिफारिश अनुसार किसी भी अच्छी कम्पनी की दवा का ही इस्तेमाल करें।

* कीटनाशक के कंटेनर पर लिखे निर्देशों को सावधानीपूर्वक पढ़ लेना चाहिए तथा निर्देशों का पालन अच्छे से करना चाहिए।

* घोल बनाने हेतु कभी भी गंदे पानी या खारे पानी का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए, हमेशा साफ-सुथरे पानी का प्रयोग करें।

* आवश्यकता अनुसार ही छिड़काव करें तथा कीटनाशक के घोल को कभी भी 25 घंटे के पश्चात् प्रयोग ना करें।

* तरल कीटनाशक को कंटेनर में सावधानीपूर्वक डालें एवं ध्यान रखें कि किसी भी प्रकार से शरीर में प्रवेश ना कर पाए, ऐसा होने पर तुरंत साफ पानी से धो लें।

* कीटनाशक के घोल को मिलाने के पश्चात् स्प्रे टैंक को सूंघें नहीं।

2. छिड़काव करते समय सावधानी :

* छिड़काव करते समय अलग कपड़े (एपरन) पहनें व चश्मे का इस्तेमाल ज़रुर करें। चेहरे पर मास्क लगा कर दवा का स्प्रे करें, अगर मास्क नहीं है, तो कम से कम मुंह पर कपड़ा बांध कर स्प्रे करें व चश्मा पहनें। अगर आप सामान्य कपड़े पहन कर भी स्प्रे करें, तो उन्हें तुरंत ही धो कर सुखा दें।

* कीटनाशक छिड़कने वाले को कीटनाशक के छिड़काव की पूरी जानकारी होनी चाहिए तथा स्प्रे मशीन को अच्छी तरह जांच लें। ठीक अवस्था में ही इसे इस्तेमाल में लाएं। देख लें कि कहीं लीक तो नहीं है। छिड़काव करने वाले व्यक्ति के शरीर पर किसी भी प्रकार का कोई घाव नहीं होना चाहिए।

* कीटनाशक का स्प्रे करते समय किसी भी प्रकार के खाद्य पदार्थ का सेवन या धूम्रपान नहीं करना चाहिए तथा कीटनाशक को बच्चों की पहुंच से दूर रखें। इसे ठंडी, सूखी जगह पर रोशनी से दूर ताला बंद करके रखें। अन्य किसी दवा या तेल आदि मिलती-जुलती चीज के साथ ना रखें, ऐसे में धोखा हो सकता है।

* बताई गई मात्रा से अधिक कीटनाशक का उपयोग ना करें एवं फूल आने पर फसलों में कीटनाशकों का छिड़काव कम कर देना चाहिए।

* बारिश से तुरंत पहले और बारिश के तुरंत बाद छिड़काव नहीं किया जाना चाहिए। छिड़काव तेज़ धूप वाले दिन या तेज़ हवा में नहीं करना चाहिए।

* छिड़काव हमेशा संध्याकाल में करना चाहिए तथा ध्यान रखें कि हवा की गति 7 किलोमीटर प्रति घंटा से कम हो एवं तापमान 21 डिग्री सैंटीग्रेड के आस-पास हो।

* छिड़काव हवा की दिशा में करना चाहिए तथा तुरंत बाद उस स्थान पर पशुओं या मज़दूरों को प्रवेश नहीं करने देना चाहिए।

* छिड़काव के बाद स्प्रे यन्त्र और बाल्टियों को डिटर्जेंट या साबुन से साफ पानी में धो देना चाहिए तथा स्प्रे करने वाले व्यक्ति को स्प्रे के बाद स्नान कर लेना चाहिए।

कीटनाशकों के प्रयोग के बाद की सावधानियां

* बची हुई स्प्रे कीटनाशकों को बेकार या बंजर भूमि में फेंक कर नष्ट कर देना चाहिए। इसको कभी भी नालियों के आस-पास या तालाब या फिर पानी में नहीं बहाना चाहिए।

* कीटनाशकों के खाली डिब्बे या बोतल को अन्य किसी काम के लिए प्रयोग नहीं लाना चाहिए तथा ना ही उसमें कोई अन्य सामग्री का भंडारण करना चाहिए।

* कागज़ या फिर कीटनाशक के डिब्बे को यदि जलाना हो तो उसको जलाते समय उसके पास खड़ा नहीं होना चाहिए।

* फसल में जो भी कीटनाशक छिड़काव किया गया हो, उसका पूर्ण ब्यौरा रखना चाहिए।

* कीटनाशक छिड़काव के लगभग 6 घंटे बाद तक वर्षा नहीं होनी चाहिए। यदि ऐसा होता है, तो दोबारा कीटनाशक का छिड़काव करें।

* कुछ भी खाने से पहले हाथ और चेहरे को साबुन से अच्छी तरह से धो लें।

* रसायन का शरीर पर असर होने पर तुरंत डॉक्टर से सम्पर्क करें।

* छिड़काव के समय साफ पानी अलग से एक बड़े बर्तन में ज़रुर रखें ताकि ज़रुरत पड़ने पर उसे इस्तेमाल किया जा सके।

* अगर रसायन शरीर पर गिर जाए और उससे जलन आदि महसूस हो, तो तुरंत साबुन और पानी से अच्छी तरह धोना चाहिए तथा रसायन अगर आंख में चला जाए, तो कम से कम 15 मिनट तक साफ पानी से धोते रहें।

यदि किसी व्यक्ति के अंदर कीटनाशक शरीर के अंदर जाने पर या उसका असर होने की स्थिति में एक गिलास गुनगुने पानी में दो चम्मच नमक मिला कर उल्टी करवानी चाहिए अथवा एक गिलास गुनगुने पानी में 1 ग्राम ज़िंक सल्फेट मिला कर देना चाहिए। कोई भी लक्षण दिखने पर सर्वप्रथम प्राथमिक उपचार करें और मरीज को डॉक्टर को दिखाएं। डॉक्टर को खाली कंटेनर या पैकेट भी दिखाएं, ताकि समय रहते उपचार किया जा सके कि इन बातों को नज़र-अंदाज ना करें व सावधानियां बरतें।

बरसात में भी पौधों को मिले आपका साथ

बारिश का मौसम जहां पौधों की पैदावार और बढ़त के लिए बेहतरीन माना जाता है, वहीं ध्यान ना देने पर कई पौधों के खराब होने का कारण भी बनता है। तेज़ गर्मी में पौधे मरते हैं, तो हम अक्सर सोचते हैं कि बारिश में अच्छे हो जाएंगे। लेकिन बारिश से भी कई पौधे मर जाते हैं। बारिश के सुहाने मौसम का स्वागत करने के लिए हमें अपनी बगिया में कुछ काम ज़रुर कर लेने चाहिए, ताकि पौधे हैल्दी रहें और हमारा बागीचा हरा-भरा रहे।

वॉटरिंग का रखें ध्यान : वैसे तो बारिश का पानी पौधों के लिए अमृत समान होता है, लेकिन ओवरवॉटरिंग से पौधों की जड़ें गल जाती हैं। कम बारिश हो तो पौधे खुले में रख सकते हैं, वरना लगातार बारिश होने पर मिट्टी सूख नहीं पाएगी और पौधे की जड़ें खराब हो सकती हैं। कुछ पौधों तक बारिश का पानी नहीं पहुंचता, उनका भी ध्यान रखना ज़रुरी है। कई बार बारिश का पानी छत के ऊपर से गिरता है और नीचे गमला रखा हो, तो लगातार टपकने या गिरने से मिट्टी में छेद हो जाता है और पौधे की जड़ खराब हो जाती है। ऐसी जगह से पौधे को हटा देना चाहिए। हटाना संभव ना हो तो टपकने वाली जगह पर एक पत्थर रख दें। बारिश से बचने के लिए पौधों के ऊपर या बाल्कनी में प्लास्टिक शीट लगा दें, जो रेनकोट का काम करेगी और पौधों को बचाएगी।

ड्रेनेज होल करें चैक : गमलों के ड्रेनेज होल को ज़रुर चेक करें कि वो ब्लॉक तो नहीं है। इसके लिए आप पेचकस, छोटा तार, स्वेटर बुनने की सिलाई जैसी पैनी चीज़ लें। गमला ज़मीन पर लिटा कर नीचे की तरफ बने ड्रेनेज होल में पैनी चीज़ डाल कर घुमाएं, ताकि जमी मिट्टी निकल जाएगी और होल खुल जाएगा। इससे गमले के अंदर रखा पत्थर भी थोड़ा हिल जाएगा और ड्रेनेज बन जाएगा। क्योंकि बरसात का पानी गमलों में भर जाता है, जिसका निकलना ज़रुरी है। इसके साथ ही गमलों के नीचे रखी जाने वाली प्लेट्स को इस मौसम में हटा दें क्योंकि उसमें पानी इकट्ठा होता रहेगा, जो मच्छर का कारण बन सकता है।

करें पौधों की प्रूनिंग : आप अपने पौधे को ज्यादा खूबसूरत बनाना चाहते हैं, तो इस मौसम में हार्ड या सॉफ्ट प्रूनिंग करें। बरसात का पानी ज्यादा पड़ने से उनमें फंगस भी लग जाती है, कई बार उनकी शेप भी खराब हो जाती है और कई बार तो जड़ से भी उखड़ जाते हैं। कटाई करने से पौधे हेल्दी होंगे। अगर आपकी बगिया में बड़े-बड़े पौधे लगे हों, तो उनकी हार्ड प्रूनिंग करें। पौधों की कटिंग्स को फेंकने के बजाये मिट्टी या पानी में दोबारा उगा लें, ताकि नए-नए पौधे नियमित हो सकें। छोटे पौधों को शेप देने और अच्छी बढ़त के लिए सॉफ्ट प्रूनिंग भी करते रहें। अगर आप पौधों की प्रूनिंग नहीं करना चाहते, तो बड़े पौधों को सपोर्ट दें। इसे किसी डंडे, खंबे या मज़बूत पौधे से बांध दें ताकि वे बारिश के मौसम में तेज़ बारिश या हवा को बर्दाश्त कर पाएं।

कटिंग से उगाएं नए पौधे : अगर आप पौधों की कटिंग लगाना चाहते हैं, तो बारिश का मौसम बेस्ट है। 5-6 इंच की कटिंग लें, जिसमें नीचे की तरफ के 2-3 लीफ-नोड ज़रुर हों। उसे किसी भी मिट्टी में आसानी से लगा दें। कटिंग के गमलों को छायादार जगह पर रखें ताकि बरसात के बाद की तेज़ धूप से कटिंग खराब ना हो जाए।

उगाएं नए पौधे : बरसात के मौसम में पौधे आसानी से लगाए जा सकते हैं। आप इन्हें बीज, कटिंग या बेबी प्लांट को अलग करके आसानी से उगा सकते हैं। अगर आपको किचन गार्डनिंग का शौक है, तो आप फल-सब्जियों को इस मौसम में लगा सकते हैं। खराब होने से बचाने के लिए इन्हें तेज़ धूप और ओवर वॉटरिंग से बचाएं। शेडी एरिया या बड़े पौधों की छांव में रखें।

दें फर्टिलाइज़र : बरसात के पानी से मिट्टी के पोषक तत्व बह जाते हैं। इसलिए 10-15 दिन के अंतराल पर गोबर खाद, वर्मी कम्पोस्ट, बोनमील, नीमखली जैसे फर्टिलाइज़र देते रहें। फर्टिलाइज़र देने से पहले मिट्टी की गुड़ाई करें, घास-फूस निकाल दें। गर्मियों में तेज़ धूप से बचाने के लिए अगर आपने सूखी पत्तियों या पत्थर से मिट्टी की मल्चिंग की है, तो उन्हें निकाल दें। बारिश में इनकी वजह से फंगस लगने और पौधा खराब होने का खतरा रहता है।

करें रिपोटिंग : अगर आपके पौधे में रूट-बाउंडिंग की समस्या है, यानी जड़ें इतनी बड़ी हो गई हैं कि गमले की मिट्टी कम पड़ रही हो और वे फैल ना पा रही हों तो ऐसे पौधों को बड़े गमले में लगाने या रिपोर्टिंग करने के लिए बारिश का मौसम सबसे अच्छा है। पौधे की जड़ों को टूटने से बचाने के लिए पौधे को पानी में भिगोकर मिट्टी हटा लें, उसके बाद बड़े गमले में लगाएं। रिपोर्टिंग करते हुए आप पौधे की रूट-डिवीज़न करके एक पौधे से ज्यादा पौधे भी बना सकते हैं।

पौधों को रखें सुरक्षित : सैकुलेंट, एडेनियम या कैक्टस जैसे पौधे ज्यादा पानी और बारिश के मौसम में मौजूद ह्यूमिडिटी से खराब हो जाते हैं, इसलिए इन छोटे-छोटे पौधों को ऐसी जगह रख दें, जहां बारिश ना आती हो। आप चाहें तो इन्हें इंडोर भी रख सकते हैं। सुरक्षित जगह ना होने की स्थिति में इन पौधों के ऊपर पॉलीथीन या प्लास्टिक शीट से ढक दें। ध्यान रखें कि थोड़ी जगह ज़रुर हो ताकि हवा का फ्लो बना रहे।

इंसेक्ट्स से करें बचाव : ह्यूमिडिटी की वजह से बारिश के मौसम में पौधों को इंफेक्शन या इंसेक्ट्स लगने का खतरा बना रहता है। बचाव के लिए समय-समय पर नीम ऑयल का छिड़काव करते रहें। पौधे की पत्तियों में छेद हो रहे हों, सफेद पाउडर जैसा तत्व हो, पत्तियां मुड़ रही हों - तो तुरंत इंसेक्टीसाइड या फंगीसाइड का स्प्रे करें, ताकि दूसरे पौधों को नुकसान ना हो।

रजनी अरोड़ा

नींबू, आम, लीची, अमरूद, लुकाठ, बेर और पपीता लगाने के लिए यह महीना उत्तम

जुलाई महीना फलदार पौधे नींबू, आम, लीची, अमरूद, लुकाठ, बेर व पपीते के बाग लगाने के लिए बहुत बढ़िया है। भारी बारिश के कारण कई तोड़ें। बेरों के तैयार पेड़ों को 500 ग्राम यूरिया प्रति पौधा इस महीने डालना चाहिए। किन्नू में झाड़ और फलों की गुणवत्ता सुधारने के लिए पोटाशियम नाइट्रेट 1.0 काफी है। नींबू और अंगूरों में मिलीबग की रोकथाम के लिए पत्तों की निचली और नर्म शाखाओं, ज़मीन से छूती टहनियां व फलों की जांच करते रहें। बागों को पैरों गलन के रोग की रोकथाम के लिए मुख्य पौधों की छत्री में ज़मीन और मुख्य तनों पर 50 मिलीलीटर सोडियम हाइपोक्लोराइड को 10 लीटर

बार बागों में ज्यादा पानी खड़ा हो जाता है। अतिरिक्त पानी निकाल देना चाहिए, क्योंकि इससे पौधों को नुकसान हो सकता है। खाली ज़मीन पर अंतर फसलों की खेती और हरी खाद के लिए सावन की फलदार फसलें मूंगी, मांह, जंतर आदि बीज सकते हैं। नाख के फल बगैर टहनियों की टूट-फूट करने से प्रतिशत की स्प्रे करें। चूने की कली तने के चारों ओर लपेट दें। इससे तना गर्मी से बचा रहेगा। नींबू को लगने वाले कीड़ों की रोकथाम के लिए 200 मिलीलीटर क्रोकोडायल/कान्फीडोर 17.8 एस.एल. या 160 ग्राम एक्टारा (थायामिथोक्सम) को 500 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें। यह घोल एक एकड़ बाग के लिए साफ रखने के लिए खरपतवारों और घास की रोकथाम करें। टहनियों की कांट-छांट इस ढंग से करें कि ज़मीन को ना छूहें। बागों में चींटियों/कीटों के भौंण को नष्ट करें। नींबू जाति की टहनियां सूखने पर, स्कैब और कोहड़ रोग को रोकने के लिए बोर्डो मिश्रण का छिड़काव 15 दिनों के अंदर करें। नींबू जाति के पानी में घोल कर प्रति पौधा पाया जा सकता है। अंगूरों के पौधों को कोहड़ रोग से बचाने के लिए पहले और अंतिम सप्ताह में बोर्डो मिश्रण का छिड़काव 500 लीटर पानी प्रति एकड़ करें। अमरूदों में फल की मक्खी की रोकथाम के लिए पीएयू फ्रूट फ्लाई ट्रैप (16 ट्रैप प्रति एकड़) लगाएं।

हमारे देश में बरसात ऋतु का मौसम चल रहा है। बरसात ऋतु में वातावरण में कुछ बदलाव होते हैं, जैसे हवा में नमी और उसके साथ-साथ उमस बढ़ती है। इस प्रकार का वातावरण सूक्ष्म जीवाणुओं के फैलाव हेतु अत्यंत पोषक होता है। इन सूक्ष्म जीवाणुओं में रोग पैदा करने वाले सूक्ष्म जीवाणु भी होते हैं, जो इस ऋतु में कई तरह के संक्रमण फैलाते हैं और इससे पशु बीमार हो जाते हैं। बीमार होने पर उनका चाराग्रहण कम होता है तथा इसके अलावा उनकी शारीरिक क्रियाएं भी प्रभावित होती हैं, जिसके संयुक्त परिणाम से उनका दूध उत्पादन कम होकर पशु-पालक को आर्थिक हानि का सामना करना पड़ता है। अगर पशु-पालक निम्नलिखित वैज्ञानिक जानकारी को मद्देनज़र रखते हुए बचात्मक उपाय करें, तो उसे कम से कम आर्थिक हानि होगी।

बरसात में संकर पशुओं का वैज्ञानिक ढंग से प्रबंधन ऐसे करें

बरसात ऋतु में संकर पशुओं के शरीर पर प्रभाव तथा उपाय : बरसात ऋतु में हवा की नमी का प्रतिशत बढ़ने से उमस भी बढ़ती है, जिससे पसीना जल्दी नहीं सूखता। इस कारण शरीर का तापमान बढ़ने से पशु को बेचैनी होती है, जिससे वह ठीक से चारा ग्रहण नहीं कर पाता। प्राप्त ऊर्जा का कुछ हिस्सा शरीर का तापक्रम बरकरार रखने हेतु खर्च होने से दूध उत्पादन में कमी आती है। ऐसी अवस्था से पशुओं का बचाव करने हेतु निम्नलिखित उपाय करें :

आवास प्रबंधन : एक पशु को आदर्श आवास उपलब्ध करवाएं, जिसमें वायु संचार सुचारू रूप से होना चाहिए। आवास ऊंचाई पर स्थित होना चाहिए, ताकि उसमें तथा इर्द-गिर्द बरसात का पानी इकट्ठा ना हो। अन्यथा एकत्रित पानी में कीड़ों का प्रकोप होगा, जो पशु को और भी ज्यादा परेशान करेंगे और पशु के के ऊपर तनाव बढ़ेगा। आवास की छत टिन या अस्बेस्टोस की चादरों से बनी हो। छत टिन की बनी है, तो उस पर टाट/बरदाना बिछा हो, ताकि वह कम गर्म हो तथा जब बरसात होती है, तब कम से कम आवाज़ पैदा हो। लगातार शोर-शराबे से पशु बेचैन होते हैं तथा उन पर तनाव आता है, जिससे उनका चारा ग्रहण कम होकर दूध उत्पादन में कमी आती है। आवास में हवा का संचार सुचारू रूप से होता रहना चाहिए, ताकि अंदरूनी हिस्सा सूखा तथा ठंडा रहे।

आवास का फर्श पक्का होना चाहिए ताकि वहां कीचड़ ना हो। पशुओं को सूखा तथा ठंडा फर्श बहुत सुहाता है और बैठने तथा आराम करने हेतु लाभाता है। गंदा, गीला, चुभने वाला फर्श पर उन्हें असुविधा होती है, अत: बैठना टालते है। परिणामस्वरूप उन्हें पर्याप्त आराम नहीं मिल पाता और उन पर तनाव बढ़ कर दूध उत्पादन में थोड़ी कमी आती है। कच्चा फर्श है, तो बरसात ऋतु आरम्भ होने से पूर्व कुछ सूखे मुरूम से भरे बोरे संग्रहित कर रख लेने चाहिए। गीला होने पर यहां कुछ मुरूम डाल कर दुम्मस कर ठीक-ठाक कर लेना चाहिए।

बरसात के दिनों में संक्रमण का खतरा ज्यादा रहता है, अत: जितनी ज्यादा सफाई रखें, उतना अच्छा रहता है। पक्का फर्श है, तो उसे फिनाईल मिश्रित पानी से धोवें। आवास से गोबर की निकासी तुरंत करें, ताकि कीचड़ ना हो। कीचड़ होने से पशु को असुविधा होती है। संक्रमण फैलने की ज्यादा संभावना रहती है तथा कीड़ों का प्रकोप ज्यादा होता है, जो असुविधा को और भी बढ़ाते है। सफाई से आवास में कम गैस (मिथेन) रहती है। आवास के इर्द-गिर्द पक्का फर्श हो, तो बढ़िया रहता है। पानी इकट्ठा नहीं होता और आवास के आस-पास का वातावरण सुखद रहता है।

ध्यान रखें कि बरसात में पशु कम से कम समय रहे। संकर पशुओं की रोग प्रतिरोधक क्षमता तथा विपरीत स्थितियां (जैसे कि भारत जैसे तीव्र जलवायु वाले क्षेत्र में होती है) को बर्दाशत करने की क्षमता देशी नस्ल के भारतीय मूल के पशुओं की अपेक्षा कम होती है। संकर पशुओं को ज्यादा देखभाल की ज़रुरत होती है। अत: उन्हें तेज़ बरसात से बचाए रखें। संकर पशुओं को खुरों के रोग भी देशी पशुओं के मुकाबले ज्यादा होते हैं। अत: उन्हें सूखे फर्श पर ही रखें। कीचड़ या पानी में ना रखें। अन्यत: खुरों में संक्रमण होकर लम्बे समय तक महंगा उपचार करना पड़ता है, जिससे

मुनाफा कम मिलता है।

आवास में फर्श, दीवारें और जहां-कहां कहीं भी दरारें हैं, वहां सीमेंट या गीले चूने या पुट्टी/प्लास्टर ऑफ पेरिस पाऊडर से भर कर बंद करवा लें ताकि उनमें चीचड़, चींटियां तथा अन्य कीड़ों को रहने हेतु जगह ना मिलें। हर महीने साइपरमैथरीन या डेल्टामैथरीन दवा से 2-4 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल कर आवास में छिड़काव करें। ध्यान रहे कि छिड़काव के समय कोई पशु आवास में ना रहे। कीड़े पशु के तनाव को बढ़ाते हैं, अत: उन्हें खत्म कर दें। बरसात के पूर्व आवास की दीवारें अंदर से चूने से पुतवा लें। इससे आवास में मौजूद मकड़ियां मर जाएंगी तथा उनके जाले निकल जाएंगे। आवास में उजाला ज्यादा आएगा तथा अंदरूनी वातावरण उदास ना लग कर सुहाना लगेगा। ध्यान रहे, आदर्श आवास का पशु की मानसिक स्थिति, बढ़वार, संप्रेरकों का स्त्रवण, प्रजनन, चारा ग्रहण तथा उत्पादन के अलावा स्वास्थ्य से काफी संबंध है तथा इन सभी मुद्दों पर आदर्श आवास का अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

बरसात ऋतु में पशुओं का आहार : बरसात ऋतु में पशुओं की पाचन क्षमता कम हो जाती है। अत: उन्हें सुपाच्य, पौष्टिक, साफ-सुथरा (फफूंद से मुक्त) आहार दें। हरा चारा ज्यादा ना दें, अन्यथा अतिसार की संभावना रहती है और पेट फूलने की भी संभावना रहती है। उन्हें खनिज-लवण युक्त ईंट प्रदान करें ताकि शरीर से पसीने के जरिए निकले खनिजों की पूर्ति हो सके। सूखा चारा पर्याप्त मात्रा में खिलाएं ताकि उनका शुष्क पदार्थों का अंतर भाव ग्रहण ठीक रहे और दुग्ध उत्पादन में कमी ना हो।

पानी प्रबंधन : बरसात में संक्रमण आसानी से फैलने में पीने के पानी की भूमिका हो सकती है। अत: पशुओं को ताज़ा, साफ पानी उपलब्ध करवाएं। पानी की टंकी की सफाई निहायत ज़रुरी है, अत: पीने का पानी ज़रा भी गंदा नज़र आए, उनमें पत्ते, कचरा या इल्लियां, कीड़े नज़र आएं तो ऐसा गंदा पानी पशु को कतई पीने ना दें।

गंदा पानी निकाल कर टंकी चूने से अंदर-बाहर से अच्छी तरह पुतवा लें तथा सूखने दें। इससे कई बार पानी की टंकी में बढ़ने वाली काई (हरा शैवाल) मर जाते है और पानी साफ रहता है। बरसात में पानी में पोटाशियम परमैगनेट के कुछ कण डाल दें या फिटकरी घुमा कर निकाल लें। ध्यान रहे पशु भी जीव है। उन्हें भी हमारी तरह साफ पानी मिले, तो बीमारियों का खतरा कम हो जाता है।

दूध दोहन प्रबंधन : बरसात में हवा में नमी बहुत ज्यादा होती हुई, अत: सूक्ष्म जीवाणुओं की बढ़वार ज्यादा होती हुई और तेज़ी से होती है व दूध जल्दी खराब हो जाता है। अत: साफ-सफाई का विशेष ध्यान रखें। दूध दोहन से पहले गाय का अयन तथा थन साफ पानी से धोयें। गाय के पिछले पैर तथा दुम रस्सी से बांध लें ताकि दूध दोहन के समय गाय ने अगर दुम हिलाई तो दूध में छींटे नहीं गिरेंगे और दूध दूषित नहीं होगा। दूध दोहन से पहले ग्वाले अपनी हथेलियां साबुन तथा पानी से ठीक से धोयें। दूध दोहन के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले बर्तन का मुंह छोटा होना चाहिए और वह साफ होना चाहिए। दूध दोहन के तुरंत बाद मलमल के दोहरे कपड़े से दूध छान लें और उस पर ढक्कन लगा लें।

टीकाकरण : पशु प्रबंधन का सुनहरा तत्व है कि बचाव उपाय श्रेष्ठ है। अत: पशुओं को टीकाकरण करने से उनके शरीर में उन बीमारियों के प्रति रोग प्रतिरोधक क्षमता विकसित हो जाती है और संक्रमण फैलने पर वह उस बीमारी से बच जाते हैं। अत: पशुओं का टीकाकरण पशुओं के डॉक्टर द्वारा करवा लें। टीकाकरण में खुरपका, मुंहपका, गलघोटू, लंगड़ा बुखार आदि रोगों के टीके लगवा लें।

आनार की आधुनिक खेती

पोषक तत्वों से भरपूर आनार का फल शरीर को रोगों से लड़ने के लिए प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करता है। इसके जूस में कार्बोहाईड्रट, शुगर, रेशा, वसा, प्रोटीन, विटामिन और खनिज तत्व पाये जाते हैं। आनार के दानों से जैली और आनार रस बनाया जाता है। इससे बना शर्बत स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होता है। दवा बनाने में भी छिलके का प्रयोग होता है। आनार का प्रयोग प्राकृतिक रंग और कपड़ों की रंगाई में भी करते हैं। इसके लाल फूल दिखने में सुंदर होते हैं। यदि वैज्ञानिक ढंग से इसकी बागवानी की जाये तो इससे काफी मुनाफा मिलता है। आनार में अनेक प्रकार के कीड़े और रोग लगते हैं, जिनकी वजह से फसल को काफी नुक्सान होता है। यदि समय रहते इनकी रोकथाम की जाये उत्पादन अच्छा है।

आनार, उपोष्ण जलवायु का एक प्रमुख फल है। यह प्यूनिकेसी कुल का सदस्य है। आनार का उत्पत्ति स्थान ईरान है, फिर भी विश्व के बहुतायत देशों जैसे-भारत, मिसर, ईरान, मोरक्को, स्पेन एवं अफगानिस्तान में इसकी खेती की जाती है। इसकी खेती भारत में सामान्यत: महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान, कर्नाटक और गुजरात में की जाती है।

महत्व :- आनार एक व्यापक महत्व का फल है। आनार के फल में काफी पोषक तत्व पाये जाते है। यह हमारे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक तत्वों को प्रदान कर, हमारे शरीर को विभिन्न प्रकार के रोगों से लड़ने के लिए प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करने वाला फल है। इसके रस में नमी की मात्रा 78 प्रतिशत, प्रोटीन 1.6 प्रतिशत, वसा 0.1 प्रतिशत, खनिज लवण 0.7 प्रतिशत, रेशा 5.1 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 14.5 प्रतिशत एवं कैलोरी की मात्रा 65 प्रतिशत होती है। इसके अतिरिक्त आनार में फॉस्फोरस 70 मि.ग्रा. पोटाश 133 मि.ग्रा. कैल्शियम 10 मि.ग्रा. मैग्नीशियम 44 मि.ग्रा., लोहा 1. 79 मि.ग्रा., सोडियम 0.9 मि.ग्रा. कॉपर 0.34 मि.ग्रा. थायमीन 0. 06 मि.ग्रा. राईबोफ्लेविन 0.1 मि. ग्रा., नियासीन 0.3 मि.ग्रा. तथा विटामिन-सी, 16 मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम खाने योग्य भाग में पाया जाता है। इसके फलों का उपयोग शर्बत बनाने में किया जाता है, जो बहुत स्फूर्तिदायक एवं स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होता है। इससे जैली एवं आनार रस भी बनाया

जाता है। इसके छिलके का उपयोग विभिन्न प्रकार की दवाओं को बनाने में किया जाता है। आनार का उपयोग प्राकृतिक रंग प्राप्त करने के लिए तथा कपड़ों की रंगाई में भी करते है। फलों की छाल से प्राप्त एल्केनाईड को पाईरागईन दवा बनाने में उपयोग करते है। इसके फल में फॉस्फोरस, लोहा तथा विटामिन-सी अधिक मात्रा में पाया जाता है। आनार की जंगली किस्मों के फलों के बीजों का प्रयोग मसाले के रूप में किया जाता है। आनार के सुंदर लाल फूलों का प्रयोग अलंकृत पौधों के रूप में किया जाता है।

जलवायु :- आनार उपोष्ण जलवायु का पौधा है। इसकी खेती के लिए शीत ऋतु में गर्म एवं शुष्क वातावरण आधि लाभदायक होता है। आनार के पौधे पाले के लिए सहनशील होते है। इसमें फल पकते समय गर्म तथा शुश्क जलवायु होने पर फलों में मिठास बढ़ जाती है तथा फल की गुणवत्ता अच्छी होती है। सामान्य: आनार की अच्छी खेती के लिए 25-30° सेल्सियस तापमान एवं 500-800 मि.मी. वार्षिक वर्षा सर्वोत्तम है। जब तापमान 11° सेल्सिय या इससे कम अधिक समय तक बना रहता है तो इसका पौधा बुरी तहर से प्रभावित होता है।

मिट्टी :- आनार की खेती हम विभिन्न प्रकार की मिट्टी में आसानी से कर सकते हैं, परंतु अच्छी जल निकास वाली भारी दोमट मिट्टी जिसका पी-एच मान 7.5 हो, आनार की खेती के लिए सर्वोत्तम होती है। इसकी खेती सामान्य से लेकर क्षारीय मिट्टी में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है।

प्रसारण :- सामान्यत: आनार का प्रसारण बीज के द्वारा किया जाता है, परंतु इस विधि में मातृ पौधे के जैसा उत्पादन व फलों की गुणवत्ता प्राप्त करना संभव नहीं होता है। अच्छे गुणों वाले फल प्राप्त करने क लिए आनार में वानस्पतिक विधि से प्रसारण करना चाहिए। इसमें व्यावसायिक वानस्पतिक प्रसारण के लिए सख्त तना कलम विधि का प्रयोग किया जाता है। कलम को लगाने का सर्वोत्तम समय वर्षा अथवा बसंत ऋतु होता है। इस ऋतु में कलम (कटिंग) से जड़ें अधिक निकलती है एवं शाखाएं भी अच्छी आती हैं। वर्षा ऋतु में लगभग 6-8 माह पुरानी आनार की शाखा का चुनाव करते हैं। शाखा की लंबाई लगभग 15 से 20 सै.मी. रखते है। इस कर्तन को सर्वप्रथम नर्सरी में लगाते है। जब नर्सरी में कलम वाली शाखा से जड़ें निकल जाये एवं पौधे का अच्छा विकास हो जाने के बाद लगभग एक वर्ष पुराने पौधे को बगीचे में लगाते हैं।

पौध की रोपाई एवं दूरी :- आनार के पौधों की रोपाई के 10 से 15 दिन पूर्व 60×60×60 सैं.मी. आकार के गड्ढे तैयार करने चाहिए। ये गड्ढे मौनसून आने के पहले या ग्रीष्म ऋतु में तैयार किये जाते हैं। सामान्यत: इससे आनार के पौधो को 5×5 मीटर या 4×4 मीटर की दूरी पर लगाना सर्वोत्तम माना जाता है। आनार में अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए संघन खेती के तहत 2.5×2.5 मीटर की दूरी बहुत उपयोगी सिद्ध होती है। आनार के पौधों की रोपाई उत्तरी भारत में बसंत ऋतु में एवं दक्षिणी व पश्चिमी भारत में वर्षा ऋतु में की जाती है। सामान्य: वर्षा ऋतु में पौधों की रोपाई सर्वोत्तम मानी जाती है। गड्ढों की भराई से पूर्व ऊपर की मिट्टी में 15-20 कि. ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद को अच्छी प्रकार से मिला लेते हैं। साथ ही एक कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट और 500 ग्राम नीम की खली मिलाकर पौध की रोपाई करके तुरंत सिंचाई कर देनी चाहिए।

कटाई एवं छंटाई :- आनार के पौधे का विकास झाड़ी जैसा होता है। ऐसी स्थिति में पौधे को अच्छा आकार देने तथा अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए पौधे में कटाई-छंटाई का विशेष महत्व होता है। इसमें 4-5 मुख्य शाखाओं को छोड़कर अन्य शाखाओं को काट देना चाहिए। यह क्रिया पौधे की शुरूआती वृद्धि के समय में करते हैं। पौधा बड़ा हो जाने पर यह प्रक्रिया नहीं करनी चाहिए। पौधे का विकास हो जाने पर पुरानी, सूखी एवं रोगग्रस्त शाखाओं को काटते हैं। इसमें यह ध्यान देना चाहिए कि जड़ों के पास से निकलने वाली शाखाओं बहुत ही तीव्र गति से वृद्धि करती है। अत: उन्हें समय-समय पर काटकर निकालते रहना चाहिए। अन्यथा ये शाखाएं आगे चलकर अधिक वृद्धि कर फूल एवं फल देने लगती है, जिससे कि आनार के फल के आकार एवं गुणवत्ता में कमी आती है।

सिंचाई :- सामान्यत: पौधे रोपाई के पश्चात सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। आनार के नये पौधों में 7 दिन के अंतराल पर ग्रीष्मा में तथा 15 दिन के अंतराल पर शीत ऋतु में सिंचाई करनी चाहिए। आनार का पौधा सूखा सहन करने वाला होता है, परंतु पौधे के विकास के समय पानी अति आवश्यक होता है। आनार के पौधे में फूल लगने से लेकर फलों की वृद्धि तक लगातार आवश्यक सिंचाई करते रहना चाहिए। यदि इस मय मिट्टी में नमी की कमी होती है तो फूल झड़ने लगते हैं तथा छोटे-छोटे फल भी झड़ जाते हैं। यदि फल का विकास अच्छा बड़े आकार का हो गया है तो ऐसी अवस्था में मिट्टी में नमी की कमी होने पर फलों में फटने की समस्या पाई जाती है। अत: आवश्यक नमी बपाये रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक :- आनार के पौधे में खाद एवं उर्वरकों का उचित उपयोग करने से पौधों का अच्छा विकास होता है। इसमें पौध लगाने के पूर्व गड्ढे में गोबर की सड़ी हुई खाद का उपयोग करना चाहिए। आनार के एक से दो वर्ष के पौधे में 250 ग्राम नाईट्रोजन, 125 ग्राम फॉस्फोरस एवं 125 ग्राम पोटाश की मात्रा का प्रयोग करते हैं। इसमें दो से तीन वर्ष के पौधे में नाईट्रोजन की मात्रा 500 ग्राम कर देते हैं, शेष फॉस्फोरस तथा पोटाश की मात्रा उतनी ही डालते हैं। तीन से चार वर्ष के पौधे में यह मात्रा 500 ग्राम पोटाश कर देते हैं। चार वर्ष या उससे अधिक उम्र के पौधों में 625 ग्राम नाईट्रोजन, 250 ग्राम फॉस्फोरस एवं 250 ग्राम पोटाश की मात्रा देते रहने से उत्पादन अच्छा प्राप्त होता है। उर्वरकों का प्रयोग उत्तर भारत में बसंत ऋतु में एवं अन्य प्रदेशों में वर्षा ऋतु में किया जाता है।

आनार की उन्नतशीत प्रजातियां :- *** ढोलका :-** इस किस्म का फल बड़े आकार का और छिलके का रंग हरापन लिए हुए भूरा होता है। इसका गूदा गुलाबी सफेद रंग का मीठा एवं रसदार, बीज मुलायम एवं आकार में छोटे होते हैं।

*** अलांडी :-** इसके फल का आकार मध्यम और छिलका हरापन लिए हुए गहरा लाल या गुलाबी होता है। इसका गूदा खट्टा-मीठा एवं बीज कड़ा होता है।

*** मस्कट लाल :-** इसके फलों का आकार मध्यम से छोटा होता है। छिलका मोटा, मध्यम मिठास एवं साथ ही बीज अधिक कड़ा नहीं होता है।

*** स्पेनिश रूबी :-** इसके फल छोटे या मध्यम आकार के होते हैं। इसका छिलका पतला, गूदा स्वादिष्ट एवं मीठा लाल रंग का, बीज छोटे तथा मुलायम होते हैं।

*** पेपर सेल :-** इसके फल मध्यम आकार के होते हैं। यह पतले छिलके वाला एवं मीठा जूस वाला फल होता है। इसके बीज मुलायम होते हैं।

*** गणेश :-** इसके फलों का आकार मध्यम से बड़ा, गूदा मीठा, रसदार एवं स्वादिष्ट होता है। साथ ही इसके बीज छोटे तथा मुलायम होते हैं।

*** ज्योति :-** इस प्रजाति का विकास भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरू द्वारा किया गया है। इसका दाना गहरा लाल रंग का एवं फल का आकार बड़ा होता हैं इसके दाने में पल्प एवं रस की मात्रा बहुत अधिक होती है तथा बीज बहुत मुलायम होता है।

*** अरक्ता :-** इस प्रजाति के फल का आकार गणेश से छोटा होता है। इसका दाना गहरे लाल रंग का एवं बीज मुलायम होता है। यह प्रजाति अपने रंग के कारण अधिक पसंद की जाती है।

बहार नियंत्रण :- आनार की फसल में सामान्यत: वर्ष में दो बार जून-जुलाई (मृग बहार) एवं फरवरी-मार्च (अंबे बहार) में फूल आते है साथ ही कभी-कभी इसमें सितंबर-अक्तूबर (हस्त बहार) में भी फूल दिखाई पड़ते है। व्यापारिक दृष्टिकोण से केवल एक बहार की फसल लेना अधिक लाभप्रद पाया गया है। इसमें बहार का निर्धारण पानी की उपलब्धता एवं बाजार की मांग के अनुसार किया जाना चाहिए। जिन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा पर्याप्त नहीं होती है, वहां पर फल मृग बहार से प्राप्त किये जाते हैं। आनार के फलों के पकते समय वातावरण में अधिक नमी होने पर फलों पर कीटों का प्रकोप बढ़ जाता है, साथ ही फल कम मीठे होते हैं। सामान्यत: मृग बहार से प्राप्त फल कम मीठे एवं कम स्वादिष्ट होते हैं और अंबे बहार से प्राप्त फल मीठे एवं बहुत स्वाष्टि होते हैं इनका बाजार मूल्य भी अधिक होता है, हमें जिस बहार का फल प्राप्त करना होता है, उसके फल आने के दो माह पूर्व सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। तत्पश्चात पौधों में अच्छी प्रकार से निराई-गुड़ाई करके उचित मात्रा में खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग करके नियमित सिंचाई करने से पौधे में अधिक फूल एवं फल आते हैं।

क्रमशः

लाभ एवं बनाने की विधि

राकेश कुमार, कौटिल्य चौधरी एवं एस.के. ठकराल,
सस्य विज्ञान विभाग, चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आज के महंगाई के ज़माने में अधिक पैदावार लेने के लिए किसान रासायनिक उर्वरकों का बहुत ज्यादा प्रयोग कर रहे हैं, जिससे उन्हें अच्छी पैदावार तो मिल जाती है, परन्तु इससे समय के साथ भूमि की उपजाऊ शक्ति कम होती रहती है। भूमि की उपजाऊ शक्ति को बनाए रखने के लिए समन्वित तत्व प्रबंधन अपनाना चाहिए, जिसके अन्तर्गत प्राकृतिक खादों का प्रयोग बढ़ेगा। इन खादों में पौधे के लिए आवश्यक मुख्य तत्व, गौण तत्व व सूक्ष्म तत्व मौजूद होते हैं। गोबर को हम अधिकतर ईंधन के रूप में प्रयोग करते हैं, जिससे वातावरण भी प्रदूषित होता है। हमें गोबर का प्रयोग खाद बनाने में करना चाहिए। सामान्य तौर पर हम गोबर की खाद या कम्पोस्ट बनाते हैं, तो उसमें कुछ पोषक तत्वों की हानि हो जाती है। हम इस खाद या कम्पोस्ट को केंचुओं की सहायता से बना सकते हैं। केंचुए जैविक कचरे को खाकर गुणवत्ता युक्त पदार्थों में रूपांतरित कर देते हैं। इस विधि को हम वर्मी कम्पोस्टिंग कहते हैं व इससे तैयार कम्पोस्ट को वर्मी कम्पोस्ट या केंचुआ खाद कहते हैं। खाद बनाने की प्रक्रिया में जैविक कचरा केंचुओं के द्वारा खाया व पचाया जाता है, इस दौरान केंचुओं की आंतों द्वारा उत्सर्जित स्रावित पदार्थ पाचित पदार्थों में मिल जाते हैं, जो शरीर से निकलने के बाद वर्मी कास्ट के रूप में केंचुआ खाद बनाते हैं। ये वर्मी कास्ट पौधे के लिए हानिकारक जीवों को दूर भगाने का काम करते हैं। केंचुआ खाद को हम ना केवल अपने खेतों में प्रयोग कर सकते हैं, बल्कि इस खाद को बेच कर हम काफी अच्छी आमदनी भी कमा सकते हैं।

केंचुआ खाद के प्रयोग के लाभ :

* पौधे के लिए आवश्यक पोषक तत्व संतुलित मात्रा में मिलते हैं।

* इस खाद में पौधे की वृद्धि वाले हार्मोन पाए जाते हैं।

* इस खाद के उपयोग से फसलों की अधिक उत्पादकता एवं उच्च गुणवत्ता लाई जा सकती है।

* खाद के प्रयोग से मिट्टी में हानिकारक रसायनों की पौधों के लिए उपलब्धता में कमी आ जाती है।

* मिट्टी में लाभदायक सूक्ष्म जीवों की संख्या में बढ़ोत्तरी होती है।

* मिट्टी में जैविक पदार्थ की मात्रा बढ़ती है तथा भूमि की भौतिक संरचना में सुधार होता है, जिसके कारण भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ती है।

* मिट्टी की पानी पकड़ने की क्षमता में वृद्धि होती है।

* मिट्टी में पानी व वायु का संचार अच्छी तरह से होता है, जिसके कारण पौधे की जड़ों की वृद्धि अच्छी होती है।

* गोबर को ईंधन के रूप में प्रयोग होने के बाद होने वाले पर्यावरण प्रदूषण से बचा जाता है।

* पशुशाला के कूड़े करकट एवं फसलों के अवशेषों का सही उपयोग होता है।

केंचुआ खाद में विभिन्न तत्वों की मात्रा :

नत्रजन	:	1 से 3 प्रतिशत
फास्फोरस	:	1 से 1.5 प्रतिशत
पोटाश	:	2 से 3 प्रतिशत

इन मुख्य तत्वों के अलावा कैल्शियम, मैग्नीशियम, सल्फर (गौण तत्व) व लोहा, जस्ता, तांबा, मैगनीज़ व बोरॉन इत्यादि (सूक्ष्म तत्व) भी कुछ मात्रा में पाए जाते हैं।

केंचुआ खाद बनाने की विधि :

1. मेढ़ में बनाना : इस विधि से खाद जल्दी से तैयार हो जाता है। मेढ़ की लम्बाई, चौड़ाई और ऊंचाई निम्नलिखित प्रकार से रखते हैं :

लंबाई	:	आवश्यकता अनुसार
चौड़ाई	:	3 फुट
ऊंचाई	:	2 फुट

2. गड्ढे में बनाना : बहुत अधिक गर्मी या सर्दी के मौसम में केंचुओं को अनुकूल वातावरण प्रदान करने के लिए यह विधि अपनाई जा सकती है। हम कच्चे गड्ढे का प्रयोग करते हैं। गड्ढा ईंट व सीमेंट से पक्का भी बनाया जा सकता है। गड्ढे

की लम्बाई, चौड़ाई और गहराई निम्नलिखित प्रकार से रखते हैं :

लंबाई	:	आवश्यकता अनुसार
चौड़ाई	:	3 फुट
गहराई	:	2 फुट

3. सीमेंट के घेरे में बनाना : सीमेंट का घेरा ज़मीन की सतह से ऊपर रख कर खाद को तैयार करने के प्रयोग में लाते हैं। जब खाद तैयार हो जाती है, तो इस घेरे को हटा कर केंचुओं व खाद को अलग कर देते हैं। फिर इस घेरे को किसी अलग स्थान पर रख देते हैं और फिर से खाद तैयार करते हैं। घेरे का निम्नलिखित आकार अच्छा माना जाता है :

व्यास	:	3 फुट
ऊंचाई	:	1 फुट

खाद बनाने की तीनों विधियों में विभिन्न सामग्रियों का प्रयोग निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है :

1. सबसे नीचे लगभग आधा फुट मोटी परत बनाते हैं, जिसमें पुराने अखबार या गत्ते बिछा कर उनके ऊपर पराली, सरसों, मोटी कड़वी, अन्य भूसे, पेड़ों की छाल या लकड़ी का बुरादा आदि डाल सकते हैं।

2. इस परत के ऊपर एक-तिहाई फुट (4 इंच) मोटी गोबर (2 सप्ताह पुराना) की परत लगाई जाती है।

3. इस परत के ऊपर एक से डेढ़ फुट मोटी घर के कूड़ा-करकट या फसल अवशेषों की परत लगाई जाती है।

4. इसके ऊपर खेत की मिट्टी की पतली सी परत (5 सैंटीमीटर) लगाई जा सकती है व इस परत के ऊपर पतली सी गोबर की परत (5 सैंटीमीटर) लगाई जा सकती है।

5. ऊपर दी गई विधि से बनाए गए मेढ़, गड्ढे या सीमेंट के घेरे में 250 केंचुए प्रति क्विंटल सामग्री की दर से लगा दिए जाते हैं।

6. केंचुए केवल अंधेरे में काम करते हैं, इसलिए मेढ़, गड्ढे या सीमेंट के घेरे में डाली गई सामग्री को कड़वी या बोरी से अच्छी तरह से ढक देते हैं।

7. केंचुओं के अच्छे प्रजनन व सही तरह से काम करने के लिए अच्छी नमी की आवश्यकता होती है। बेड में उपयुक्त नमी (नमी संग्रहण क्षमता का 75 प्रतिशत) होना चाहिए। इस नमी को बनाए रखने के लिए सर्दियों में एक बार व गर्मियों में 3 बार पानी देना चाहिए। गर्मियों में सुबह, दोपहर व शाम को पानी देना चाहिए। शुरूआत में पानी की अधिक आवश्यकता होगी, जोकि समय के साथ कम होती जाएगी। अगर खाद कम मात्रा में तैयार किया जा रहा है, तो छिड़काव से पानी दें, नहीं तो पानी की नाली से पानी दे सकते हैं। पानी केवल इतनी मात्रा में दें, जिससे पूरी सामग्री ऊपर से नीचे तक गीली हो। पानी को अधिक मात्रा में भी नहीं देना चाहिए, क्योंकि इससे वायु के संचार में बाधाएं उत्पन्न होंगी, जिससे कि केंचुओं के प्रजनन व खाद बनाने की क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

8. केंचुए बिना किसी अधिक देखभाल के अपने आप को जिंदा रख सकते हैं। ये अधिक गर्मी व सर्दी में भी अपने आप को जीवित रखते हैं, परन्तु इन परिस्थितियों में इनकी प्रजनन की क्षमता व भोजन ग्रहण करने की क्षमता कम हो जाती है। खाद बनाने के लिए 15 से 25 डिग्री का तापमान अनुकूल रहता है। सर्दियों में तापमान को अधिक रखने के लिए 8 से 10 दिन में ताज़ा गोबर की पतली सी परत खाद्य सामग्री पर लगानी चाहिए।

9. गर्मियों में तापमान को थोड़ा कम रखने के लिए खाद बनाने के स्थान के चारों तरफ 2 से 3 फुट की चौड़ी ढैंचा की पट्टी लगानी चाहिए।

10. हर 15 दिन के अंतराल पर सम्पूर्ण सामग्री की पलटाई करनी चाहिए। इस प्रकार से 60 से 70 दिन में हम खाद तैयार कर सकते हैं। जब खाद का रंग गहरे भूरे से काला हो गया हो, तो यह हमें दर्शाता है कि खाद तैयार है। खाद तैयार होने के बाद पानी देना बंद कर देना चाहिए ताकि केंचुए नीचे चले जाएं। ऊपर की खाद को छान कर अलग कर लेते हैं, जिससे केंचुए व खाद अलग-अलग हो जाते हैं।

जहां पर केंचुआ खाद तैयार कर रहे हों, वहां कोने में एक गड्ढे का निर्माण करना चाहिए, जिसमें गोबर व फसल अवशेष डाले जा सकें। फसल अवशेषों को काट कर डालें। गोबर व फार्म अवशेषों को गड्ढे में डाल कर प्रति दिन पानी से गीले करते रहना चाहिए। इस प्रकार 2 सप्ताह में सामग्री मेढ़, गड्ढे या सीमेंट के घेरे में डालने के लायक हो जाएगी। केंचुओं को आंशिक रूप से गले कार्बनिक पदार्थ ही देने चाहिए।

केंचुए की खाद बनाते वक्त ध्यान देने योग्य बातें

- खाद केवल छायादार स्थान में ही बनाएं।
- खाद बनाने वाली जगह पर बरसात का पानी एकत्रित नहीं होना चाहिए।
- कभी-कभी पशुओं को कीड़े मारने की दवाईयां दी जाती हैं, तो ऐसी गोबर का प्रयोग ना करें, जिसमें इनके अंश होने की आशंका हो।
- घर में इस्तेमाल किए गए साबुन और डिटर्जेंट के पानी को खाद बनाते समय प्रयोग नहीं करना चाहिए।
- छोटे कीड़े-मकौड़े, चिड़िया, चूहे व अन्य छोटे जंतु केंचुए को नुकसान पहुंचाते हैं। इसलिए इनसे बचाव के पर्याप्त उपाय किए जाने चाहिए।

गायों में बर्ड फ्लू का रहस्य सुलझा, वैज्ञानिकों ने बताया कैसे फैली बीमारी

अमेरिका के डेयरी फार्मों में वर्ष 2024 के दौरान सामने आए बर्ड फ्लू (एच-5-एन-1) के असामान्य प्रकोप की गुत्थी अब वैज्ञानिकों ने सुलझा ली है। इस संक्रमण ने विशेषज्ञों को इसलिए भ्री चौंका दिया था, क्योंकि वायरस ने अपने सामान्य व्यवहार से अलग रास्ता अपनाते हुए गायों के फेफड़ों और श्वसन तंत्र की बजाय सीधे दूध ग्रंथियों को प्रभावित किया। अब वैज्ञानिकों का कहना है कि इसके पीछे गा ों के शरीर में मौजूद विशेष प्रकार के रिसैप्टर जिम्मेदार हैं, जो वायरस के लिए संक्रमण का आसान मार्ग बन गए।

शुरूआत में उलझन में थे पशु चिकित्सक

जब अमरीका के विभिन्न डेयरी फार्मों में बड़ी संख्या में गाएं बीमार होने लगीं, तो पशु चिकित्सकों को शुरूआत में बीमारी की सही वजह समझ नहीं आई। संक्रमित पशुओं में मास्टाइटिस के गंभीर मामले सामने आ रहे थे, जिसमें दूध ग्रंथियों में सूजन और ऊतकों को नुकसान पहुंचता है। चूंकि डेयरी पशुओं में यह बीमारी सामान्यत: बैक्टीरिया के कारण होती है, इसलिए शुरूआती जांच का फोक्स भी बैक्टीरियल संक्रमण पर रहा। हालांकि बाद में विस्तृत परीक्षणों से पता चला कि बीमारी के पीछे बर्ड फ्लू वायरस एच-5-एन-1 जिम्मेदार है। तब तक संक्रमण कई फार्मों और पशुओं तक फैल चुका था।

भविष्य की महामारियों से निपटने में मिलेगी मदद

वैज्ञानिकों का मानना है कि यह खोज केवल डेयरी गायों में हुए प्रकोप के समझने तक सीमित नहीं है। इससे भविष्य में यह अनुमान लगाने में सहायता मिलेगी कि एच-5-एन-1 या अन्य वायरस किसी नई प्रजाति में प्रवेश करने पर शरीर के किस हिस्से को अधिक प्रभावित कर सकते हैं। यदि विभिन्न पशु प्रजातियों में मौजूद रिसैप्टरों की संरचना और वितरण का पहले से अध्ययन किया जाए, तो संभावित संक्रमण के स्वरूप का अनुमान लगाना आसान होगा। इससे महामारी रोकथाम की रणनीतियां अधिक प्रभावी बनाई जा सकेंगी।

विशेष रिसैप्टर ने खोला रहस्य

अमरीका के यूनिवर्सिटी ऑफ पिट्सबर्ग स्कूल ऑफ पब्लिक हैल्थ के वैज्ञानिकों द्वारा किए गए अध्ययन, जो हाल ही में साइंस एडवांसेज पत्रिका में प्रकाशित हुआ है, ने इस असामान्य संक्रमण का कारण स्पष्ट किया है। शोधकर्त्ताओं के अनुसार एच-5-एन-1 वायरस शरीर की कोशिकाओं में प्रवेश करने के लिए विशेष रिसैप्टरों का उपयोग करता है। अध्ययन में पाया गया कि यह वायरस मुख्य रूप से एन-लिंकड सियालिक एसिड रिसैप्टर नामक एक विशेष प्रकार के रिसैप्टर से प्रभावी ढंग से जुड़ता है। यही रिसैप्टर गायों के थनों की ऊतकों में बड़ी मात्रा में मौजूद पाए गए।

फेफड़ों की बजाय थनों को बनाया निशाना

अध्ययन के दौरान वैज्ञानिकों ने पाया कि गायों के श्वसन तंत्र और फेफड़ों में इन रिसैप्टरों की संख्या अपेक्षाकृत कम है, जबकि दूध ग्रंथियों में इनकी प्रचुरता है। यही वजह रही कि वायरस फेफड़ों में गंभीर संक्रमण पैदा करने के बजाय सीधे थनों में तेज़ी से बढ़ने लगा। विशेषज्ञों के अनुसार थनों का ऊतक वायरस के लिए अनुकूल वातावरण साबित हुआ, जहां वह तेज़ी से अपनी संख्या बढ़ा सका। इसी कारण संक्रमित गायों में गंभीर मास्टाइटिस विकसित हुई, जबकि श्वसन संबंधी लक्षण अपेक्षाकृत कम दिखाई दिए।

दूध के जरिए बढ़ा संक्रमण का खतरा

शोध में यह भी सामने आया कि संक्रमित गायों के दूध में बड़ी मात्रा में वायरस मौजूद था। इससे फार्म कर्मचारियों तथा अन्य जानवरों तक संक्रमण फैलने की आशंका बढ़ गई। कुछ मामलों में कच्चा दूध पिलाने के बाद पालतू बिल्लियों में भी संक्रमण दर्ज किया गया। विशेषज्ञों ने हालांकि स्पष्ट किया है कि पाश्चुरीकरण की प्रक्रिया वायरस को निष्क्रिय कर देती है। इसलिए पाश्चुरीकृत दूध और उससे बने उत्पादों को सुरक्षित माना जाता है तथा उपभोक्ताओं के लिए किसी अतिरिक्त खतरे की आशंका नहीं है।

एक पेड़ की कीमत

- एक सामान्य पेड़ साल भर में करीब 20 किलोग्राम धूल सोखता है।
- हर साल करीब 700 किलोग्राम ऑक्सीजन का उत्सर्जन करता है।
- प्रति वर्ष 20 टन कार्बन डायऑक्साइड को सोखता है।
- गर्मियों में एक बड़े पेड़ के नीचे औसतन चार डिग्री तक तापमान कम रहता है।
- 80 किलोग्राम पारा, लीथियम, लेड आदि जैसे ज़हरीली धातुओं के मिश्रण को सोखने की क्षमता।
- हर साल करीब 1 लाख वर्ग मीटर दूषित हवा फिल्टर करता है।
- घर के करीब एक पेड़ अकॉस्टिक वॉल की तरह काम करता है। यानी शोर/ध्वनि को सोख लेता है।

घर के पास 10 पेड़ हैं तो जीवन 7 साल बढ़ सकता है

- विन्कॉसिन विश्वविद्यालय ने अध्ययन में बताया है कि जिनके घरों के पास पेड़ होते हैं, उनको तनाव और अवसाद की आशंका कम होती है।
- कैनेडा के जर्नल साइंटिफिक रिपोर्ट्स के अनुसार घर के पास अगर 10 के करीब पेड़ हैं जो जीवन 7 साल बढ़ सकता है।
- इलिनॉय यूनिवर्सिटी ने रिसर्च में बताया है कि घर के पास पेड़ हैं तो नींद अच्छी आती है। विशेषकर वृद्धावस्था में।

सिकोइया पेड़ों की गहरी नहीं होती हैं जड़ें

83 मीटर लंबा है दुनिया का सबसे बड़ा पेड़, इसका वज़न 14 ब्लू व्हेल के बराबर

अमेरिका के कैलिफोर्निया स्थित सिएरा नेवादा पर्वतों में पाए जाने वाले विशाल सिकोइया पेड़ अपनी असाधारण ऊंचाई और वज़न के कारण वैज्ञानिकों के लिए भी हैरानी का विषय बने हुए हैं। इन पेड़ों में सबसे प्रसिद्ध 'जनरल शेरमन' नामक पेड़ है, जिसे दुनिया का सबसे भारी जीवित पेड़ माना जाता है। नेशनल पार्क सर्विस के अनुसार, इसका वज़न करीब 2100 टन तक आंका गया है, जो 10 से 14 ब्लू व्हेल के संयुक्त वज़न से भी ज्यादा है। यह पेड़ 83.8 मीटर लंबा है। हज़ारों साल तक जीवित रहने वाले ये पेड़ लगातार बढ़ते रहते हैं और बड़ी मात्रा में कार्बन को संग्रहित करते हैं। वैज्ञानिकों के मुताबिक, इनकी संरचना और रासायनिक गुण इन्हें लंबे समय तक सुरक्षित रखते हैं। इतने भारी और ऊंचे होने के बावजूद सिकोइया पेड़ों की जड़ें ज़मीन में बहुत गहराई तक नहीं जातीं। शोध के अनुसार, इनकी जड़ें आमतौर 6 से 12 फीट तक ही गहरी होती हैं, ये चारों ओर 100 से 150 फीट तक फैल जाती हैं। खास बात यह है कि ये जड़ें आस-पास के दूसरे पेड़ों की जड़ों से जुड़ कर एक मज़बूत जाल बना लेती हैं, जो पूरे जंगल को स्थिरता देता है। यह नेटवर्क मिट्टी और लकड़ी का एक संयुक्त आधार तैयार करता है, जिससे हज़ारों टन वज़नी पेड़ भी गिरते नहीं हैं।

क्यों नहीं रुकती सिकोइया पेड़ों की वृद्धि...

वैज्ञानिकों के अनुसार इसका मुख्य कारण इनके तने में मौजूद टैनिन नामक रसायन है, जो इन्हें कीटों, आग और सड़न से बचाता है। यही वजह है कि ये पेड़ 2000 से 3000 साल तक जीवित रह सकते हैं और लगातार अपने आकार व वज़न में वृद्धि करते रहते हैं। समय के साथ ये पेड़ बड़े 'कार्बन सिंक' के रूप में काम करते हैं।

मौनसून में ऐसे रखें अनाज को सेफ

गर्मी हो या मौनसून घर का ख्याल रखना ज़रुरी होता है। वहीं घर के सबसे अहम् हिस्से यानी किचन की बात करें तो किचन में सबसे ज्यादा खतरा कीड़े–मकौड़ों से होता है। वहीं अगर किचन से कीड़े–मकौड़ों को नहीं भगाया जाए, तो ये कई बीमारियों का कारण बन सकते हैं। आज हम आपको किचन में मौजूद राशन को कैसे कीड़े– मकौड़ों से दूर रखें, इसके बारे में कुछ घरेलू टिप्स बताएंगे, जिससे आप मौनसून में हैल्दी रहेंगे।

चावल को रखें नीम से सेफ : चावल को स्टोर करने के लिए पहले नीम की पत्तियों को छाया में सुखा लें और फिर कंटेनर में नीचे रख दें और फिर चावल भर कर उस के ऊपर और पत्तियां रख दें। इससे कीड़े होने की संभावना कम होती है और अगर कीड़े होते भी है, तो इन पत्तियों के सेवन से मर जाते है।

दालों को बचाने के लिए करें सरसों के तेल का इस्तेमाल : चने, छोलों और गेहूं को धूप में सुखाया जा सकता है, लेकिन चावल को धूप में ना सुखाएं, वरना वह खराब हो जाएगा। दाल को 2 या 3 महीने के लिए स्टोर करने के लिए उस पर सरसों के तेल की मालिश करें, यानी हल्के हाथों से हल्का-सा सरसों का तेल दाल पर लगा दें और फिर धूप में सुखा कर दाल भरें। इससे वह साफ रहेगी।

ऐसे रखें दालों को सेफ : चना व दालों को ढोरों से सुरक्षित रखने के लिए अनाज के ऊपर 3 इंच मोटी रेत की परत बनाएं, लेकिन बाद में खाने के लिए इसका प्रयोग करते समय इसे अच्छी तरह साफ कर लें, ताकि सारी रेत निकल जाए। इसी तरह राजमा, छोले पर भी सरसों का तेल लगा कर धूप में सुखाने के बाद भरने से वे सुरसुरियों जैसे कीड़ों से बचे रहते हैं। इसके अलावा 100 किलोग्राम चने में 1 किलोग्राम नीम की निंबोली मिलाने से भी वे सुरक्षित रहेंगे।

गेहूं को सेफ रखने के लिए लें प्याज़ का सहारा : गेहूं को सुरक्षित रखने के लिए उसमें प्याज़ भी मिलाया जा सकता है। 1 क्विंटल गेहूं में आधा किलो प्याज़ मिलाएं। सबसे पहले प्याज़ को नीचे रखें और फिर बीच में। इसके बाद सबसे ऊपर रखें। इससे कीड़े नहीं आएंगे।

साबुत मसालों का लें सहारा : आटे और चावल को कीड़ों से बचाने के लिए साबुत लाल मिर्च और साबुत नमक डब्बे में डाल दें। खाने वाले नमक के टुकड़ों को भी कॉटन के कपड़े में बांध कर गेहूं में ऊपर-नीचे लेयर बना कर रख दें। वैसे 100 किलोग्राम गेहूं में 1 किलो भूसा मिला कर रखने से भी वह कीट व कीटाणुओं से बचा रहता है, लेकिन बाद में गेहूं साफ करने में मेहनत करनी पड़ेगी। इसलिए सोच-समझ कर ही भूसा मिला कर रखें।

ऐसे बचाएं गेहूं को खराब होने से : घरेलू प्रयोग के लोहे की टंकी आदि में गेहूं को सुरक्षित रखने के लिए टंकी में 1 क्विंटल गेहूं रखते समय तीलियों से भरी एक माचिस तली में, दूसरी मध्य में तथा तीसरी सबसे ऊपरी रखनी चाहिए। 1 किलोग्राम नीम की पत्तियों को छाया में सुखा कर भंडारण करने से पहले टंकी की तली में बिछाने से भी गेहूं खराब नहीं होता।

घर में क्यों होना चाहिए किचन गार्डन

कई लोगों को गार्डनिंग का शौक काफी ज्यादा होता है। बागवानी का शौक रखने वाले लोग बहुत खुशनुमा होते हैं, ऐसा अक्सर देखा गया है। घरों में छोटी-छोटी सब्ज़ियों की बागवानी का शौक रखना चाहिए, इससे कई लाभ होते हैं। अगर आपके घर के सामने थोड़ी-सी ज़मीन है तो उसे यूं ही खाली ना जाने दें और उसका उपयोग करें। हम आपको किचन गार्डन के लाभ बताएंगे :

1. ताज़ी हर्ब मिलना : तुलसी के पत्ते हों या मीठे नीम की पत्तियों, घर में किचन गार्डन होने पर आपको ये आसानी से मिल जाते है। आपको इन छोटी-छोटी हर्ब के लिए बाहर नहीं जाना पड़ता है।

2. पैस्टीसाईड रहित सब्ज़ी या साग : किचन गार्डन होने पर आपको मालूम रहता है कि आप क्या खा रहे हैं। आजकल बाज़ार में पैस्टीसाईड पड़ी हुई सब्ज़ियां व साग मिलता है, लेकिन घर पर उगी हुई सब्ज़ी, सही होती है।

3. सस्ता : किचन गार्डन में उगी सब्ज़ियों को बनाने से आपका बजट मेंटेन रहता है। ये सब्ज़ियां अच्छी और सस्ती होती हैं। आप मन मुताबिक समय पर उन्हें तोड़ कर बना सकते हैं।

4. स्वास्थ्यवर्धक होना : घर पर तुलसी, धनिया और पुदीना जैसी चीज़ें उगाएं। इन्हें खाएं, जिससे आपको कई रोगों से आराम मिलेगा। बुखार, अस्थमा के रोगों आदि में ये फायदा करती है। ये सब आपको हैल्दी बनाती हैं।

5. तनाव से मुक्ति : बागवानी करने से तनाव कम होता है। आपका दिमाग उसी में लगा रहता है, जिससे आप इधर-उधर की बातें सोच नहीं पाते हैं।

6. कीड़े-मकौड़े कम होना : घर में किचन गार्डन होने से कीट आदि कम पैदा होते है, क्योंकि खाली जगह का सदुपयोग हो जाता है। साथ ही कुछ विशेष प्रकार के पौधे, कीटों को भगाने में सक्षम होते है, जैसे गेंदे के पौधे को हर 3 हर्ब के बाद लगाने से हर्ब अच्छी बनी रहती है।

7. सकारात्मक परिवर्तन : बागवानी करने से आपमें सकारात्मक परिवर्तन आ जाता है। आप खुद की केयर करना भी शुरू कर देते हैं। पौधे की देखभाल करने में आपको संतुष्टि मिलती है, जिससे आपका स्वास्थ्य अच्छा हो जाता है।

किन पौधों को चाहिए कितनी बारिश!

बारिश का मौसम पौधों के लिए सबसे अच्छा माना गया है, लेकिन कुछ पौधे ऐसे होते है, जो बारिश में बाहर रहने पर खराब हो जाते है। किन पौधों को बारिश में घर के बाहर रखा जा सकता है और किन्हें घर के अंदर रखना चाहिए, ताकि वो खराब न हों, जानिए।

इन्हें घर के बाहर रख सकते हैं

गुड़हल : इस पौधे को अधिक पानी की ज़रुरत होती है। इसीलिए बारिश के समय इसे घर के बाहर गार्डन या बालकनी में रखा जा सकता है।

गेंदा : बारिश इस फूल के लिए वरदान है। वैसे तो इसे ठंड के मौसम में भी लगाया जाता है, लेकिन बरसात में यह पौधा खूब फलता-फूलता है। इसे बारिश में आराम से बाहर गार्डन या बालकनी में रख सकते है।

सदासुहागन : ये पौधा हर मौसम में लग जाता है, लेकिन बारिश के मौसम में इसके फूलों की संख्या काफी बढ़ जाती है। इसे घर से बाहर कहीं भी रख सकते हैं, ये बारिश में खराब नहीं होता।

इन्हें घर के अंदर रखें

ऑर्किड : इस पौधे की किसी भी वैराइटी को हर रोज़ पानी देने की ज़रुरत नहीं पड़ती। इसलिए बारिश में इसका खास ख्याल रखें। अधिक पानी से ये खराब हो सकता है।

डहेलिया : इस पौधे को भी बहुत पानी की ज़रुरत नहीं होती। बारिश के वक्त इसे बाहर गार्डन में ना रखें, क्योंकि अधिक पानी के कारण इसकी जड़ें सड़ सकती है।

एलोवेरा : इसकी पत्तियों में पानी मौजूद रहता है। इसलिए अधिक पानी से इसके खराब होने की आशंका रहती है। इसी तरह जेड प्लांट (सक्यूलेंट्स) जैसे पौधों को भी बारिश में पानी ना दें। इन्हें तभी पानी दें, जब मिट्टी सूखी दिखने लगे।

सूर्य से मिलने वाली ऊर्जा को वापस करने की पृथ्वी की क्षमता घट रही है

नई चेतावनी : धरती अनुमान से 30 प्रतिशत तक ज्यादा तेज़ी से गर्म हो सकती है

धरती पहले के अनुमानों से कहीं अधिक तेज़ी से गर्म हो रही है। वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर मौजूदा रुझान जारी रहे तो आने वाले वर्षों में ग्लोबल वार्मिंग मौजूदा आंकलन से 10 से 30 प्रतिशत तक अधिक हो सकती है। इसका असर भीषण गर्मी, जंगलों में आग, सूखा और चरम मौसमी घटनाओं के रूप में पहले से ज्यादा दिखाई देगा। 2027 के अब तक का सबसे गर्म साल बनने की संभावना है, जबकि प्रशांत महासागर में मज़बूत हो रहे अल नीनो के कारण अगले साल भी हालात गंभीर बने रह सकते हैं।

वैज्ञानिकों की सबसे बड़ी चिंता पृथ्वी के ऊर्जा असंतुलन को लेकर है। सामान्य स्थिति में पृथ्वी सूर्य से मिलने वाली ऊर्जा का एक हिस्सा अंतरिक्ष में लौटा देती है। इसी प्रक्रिया को अल्बेडो कहा जाता है, लेकिन पिछले दो दशकों में उपग्रहों से मिले आंकड़े बताते हैं कि पृथ्वी की यह क्षमता तेज़ी से घट रही है। नतीजतन ज्यादा सौर ऊर्जा धरती और समुद्रों में ही फंस कर रह जाती है, जिससे तापमान लगातार बढ़ रहा है। क्लाइमेट वैज्ञानिक रेटो नुटी के अनुसार पृथ्वी का ऊर्जा असंतुलन जिस गति से बढ़ रहा है, वह संकेत देता है कि भविष्य में ग्लोबल वार्मिंग मौजूदा अनुमानों से कहीं ज्यादा हो सकती है। इसकी झलक पहले ही दिखने लगी है। प्रशांत महासागर की गहराइयों में जमा अतिरिक्त गर्मी अब समुद्र की ऊपरी लगभग 100 मीटर परत तक पहुंच चुकी है। अल्बेडो घटने की एक बड़ी वजह समुद्रों के ऊपर ठंडे बादलों में कमी भी मानी जा रही है। ग्रीनहाउस गैसों के कारण समुद्र अधिक गर्म हो रहे हैं और इससे बादलों का निर्माण प्रभावित हो रहा है।

दूसरी ओर, औद्योगिक प्रदूषण कम करने के प्रयास भी एक नई दुविधा पैदा कर रहे हैं। वातावरण वैज्ञानिक पॉल क्रटजेन ने वर्षों पहले आगाह किया था कि जीवांशम ईंधन से निकलने वाले सल्फर डाइऑक्साइड के सूक्ष्म कण भले ही मानव स्वास्थ्य के लिए नुकसानदेह हों, लेकिन वे सूर्य की कुछ ऊर्जा को अंतरिक्ष में परावर्तित कर पृथ्वी को ठंडा रखने में भी भूमिका निभाते हैं। सल्फर उत्सर्जन घटने से यह प्राकृतिक 'कूलिंग प्रभाव' भी कमज़ोर हुआ है, जिससे ग्लोबल वार्मिंग और बढ़ सकती है। वैज्ञानिकों का कहना है कि केवल ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन घटाना पर्याप्त नहीं होगा। पृथ्वी की सूर्य के प्रकाश को परावर्तित करने की क्षमता कैसे बढ़ाई जाए, इस पर भी तेज़ी से काम करना होगा। क्योंकि यदि ऊर्जा असंतुलन लगातार बढ़ता रहा, तो जलवायु परिवर्तन की रफ्तार को नियंत्रित करना पहले से कहीं अधिक कठिन हो जाएगा।

जून और जुलाई अब तक के सबसे गर्म महीने

समुद्रों की बढ़ती गर्मी के संकेत लगातार सामने आ रहे हैं। 14 जुलाई को भूमध्य–रेखा के आस–पास और उससे उत्तर–दक्षिण के समुद्री इलाकों का तापमान अब तक के सभी 14 जुलाई के रिकॉर्ड से अधिक रहा। जुलाई के कई दिन और जून का लगभग पूरा महीना भी इसी तरह रिकॉर्ड गर्म रहा। इसका असर दुनिया भर में दिख रहा है। यूरोप मई के बाद तीन बार भीषण हीटवेव झेल चुका है, जिनमें हज़ारों लोगों की मौत हुई। वहीं, चीन के तटीय इलाकों में लाखों लोगों को बेघर करने वाले सुपर टाइफून 'बावी' को भी असामान्य रूप से गर्म समुद्र से ताकत मिली।